।। भूमिका ।।

भावश्री एक ऐसा ग्रंथ है जिसमें कवि ने अपने गुरुओं, कवियों, विद्वानों एवं कुछ मित्रों को संस्कृत श्लोकों में निबद्ध पत्र लिखें हैं। यहां पत्र तो बस नाम मात्र ही है , अपितु विवेचनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो कवि ने प्रतिपद अपनी विद्वत्ता, प्रतिभा, चिन्तन, कल्पनाशक्ति एवं नैकविध ज्ञान का उपस्थापन नानाछन्दोबद्ध कवितात्मक रूप से किया है। एवं यहां पत्र का तात्पर्य सिर्फ ये नहीं है कि अपने हाल-चाल लिखना या दूसरे के पूछना , अपितु कवि के हृदय में समय-समय पर उदित विशिष्ट चिंतन का, विशिष्ट भावों का , सामाजिक चेतना का , प्रकृति चिंतन का , समसामयिक स्थिति का , वर्तमान विडंबनाओं का, यहां कवि ने बहुत ही चमत्कारिक पद्धति सें अपनी प्रतिभा एवं कल्पनावैचित्र्य का परिचय देते हुए, भावपूर्ण वर्णन किया है। जहां एक तरफ संस्कृत के श्लोकों की छन्दोबद्धता है , वहीं अनेक तथ्यों का बहुत ही कुशलतापूर्ण ढंग से चित्रण करना कवि के वैशिष्ट्य को प्रकट करता है। इस भावश्री ग्रन्थ में स्थित पत्रों में जो श्लोकरूपी कविताएं हैं , वे ऐसी लगती है जैसे एकान्त-शान्त जंगल में लयबद्ध तरीके से कोई झरना झर-झर करके गिरता हुआ मधुर संगीत को जन्म दे रहा हो।

इन कविताओं में आपको साहित्यशास्त्रीय-तत्त्व प्रचुर मात्रा में मिलेंगे एवं यत्र-तत्र ज्योतिष , तंत्र, व्याकरण, पुराण , भक्ति आदि विषयों से सम्बद्ध तथ्य भी आपको दृष्टिगोचर होंगे। आप इसमें देखेंगे कि किस प्रकार कवि की चिंतनशक्ति, एक विचित्रलोक में विचरण करती है उन्होंने कई बार स्वयं को भी अनेक रूपों में इस काव्य में प्रकट किया है, जैसे -

हिमांशुर्वायुपूद्भ्रान्तो तुभ्यं पत्रं लिखेदहो।

अर्थात् यहां हिमांशुजी , जो कि खुद ग्रन्थरचयिता हैं वे कह रहे हैं कि - हे जैनेन्द्र! यह हिमांशु जो विप्र है, वह स्वप्नों में अनेक लोकों में विचरण करता है,और मानो हवाओं में उद्भ्रान्त (उत्कृष्टेन भ्रान्तः अर्थात् उड़ता हुआ या वायुशरीर को धारण करके) तुम्हें यह नैकभावाश्लिष्ट पत्र लिख रहा है। इसी प्रकार कवि ने अनेक स्थानों पर अपने मौलिक एवं अत्यन्त विशिष्ट चिन्तन का परिचय दिया है ! ऐसा चिन्तन, जो हमेशा यही बताता है कि कवि की प्रतिभा अत्यन्त विलक्षण एवं सबसे अलग है। जैसे, स्वयं अपने मस्तिष्क में दौड़ते हुए अनेक विचारों के विषय में कवि ने क्या कल्पना की है देखिए -

अस्मच्चित्तेषु कोऽयं नश्शिवो भूत्त्वा प्रवेगवान् ।
बिल्वपत्रसोद्गन्धीभूय भूयोऽनुधावति ।।

अर्थात् बिल्वपत्र की सुगन्धि से कवि को इतना सुखकर अनुभव था, वे इतना बिल्वपत्र की सुगन्ध अपने मनो-मस्तिष्क में महसूस करते थे, कि उन्होंने यह कल्पना की – *हमारे मस्तिष्क में यह कौन है, जो शिवरूपी (कल्याण कारक) विचार बनकर दौड़ रहे हैं ,जो अत्यन्त तीव्र गति से कल्पनाओं का प्रवाह है , यह मानो बेलपत्र के रस की सुगन्धि से सना हुआ है -* यह इस श्लोक का भावार्थ है। इस तरह का विशिष्ट चिन्तन कवि की कल्पना के विचित्र संसार को दर्शाता है। यदि साहित्य की दृष्टि से भी देखें तो भी अनेक छन्द, अलङ्कार, रस आदि के प्रयोग से यह भावश्री ग्रन्थ अत्यन्त रुचिकर एवं पठनीय हो जाता है। व्याकरण शास्त्र के छात्रों के लिए भी यह ग्रन्थ मुख्य भूमिका निभाता है, क्योंकि कवि ने अनेक प्रकार के प्रत्ययों, तद्धित, समास कृदन्त तिङन्त इत्यादि का बख़ूबी प्रयोग किया है। इस ग्रन्थ में ८११ श्लोक हैं, जिसके कारण इसका स्वरूप विस्तृत हैं। अतः ग्रन्थ में निहित पूर्ण ज्ञान का तो इसका पूर्ण अध्ययन करने के बाद ही पाठक लाभ ले पाएंगे। वस्तुतः यह ग्रन्थ भी स्वयं में किसी महाकाव्य से कम नहीं है। यहां किसी कथा के कथानक , या महाकाव्य के नायक-नायिका की तरह किसी पात्र विशेष पर ये सम्पूर्ण ग्रन्थ नहीं टिका है,

अपितु प्रत्येक श्लोक एक नए ही भाव, एक नए हर्ष, को लेकर आता है। अतः आधुनिक काव्य-संसार में इसका विशिष्ट ही महत्त्व है। अनेक विषयों की इसमें चर्चा है।

शोधार्थियो के लिए यह ग्रन्थ विशेष रूप से लाभप्रद है। यदि साहित्यशास्त्र के शोधार्थी इस ग्रन्थ का समीक्षात्मक या साहित्यिकदृष्ट्या अनुशीलन करें तो वह बहुत ही नया एवं हितकर रहेगा। क्योंकि समीक्षात्मक अध्ययन में काव्य के अनेक शास्त्रीय तथा सामाजिक व चिन्तनात्मक पक्षों का उद्घाटन अवश्य ही संस्कृतच्छात्रों को विभिन्न चिन्तनों से ओतप्रोत कर भावाब्धि में निमज्जित कर, शास्त्रसेवा में प्रतिष्ठित कर विशिष्ट चिन्तन-पथ पर अग्रसर करेगा। ऐसा प्रेरक,सौहार्दपूर्ण, भावुक, शास्त्रमहिमासम्पन्न, शैवभा-विभासित ग्रन्थ लिखने के लिए मैं आचार्यवर को हार्दिक धन्यवाद देता हूं, तथा इस भावश्री को प्राप्त कर हम सभी श्रीविमण्डित हों , इसी भावना के साथ ग्रन्थ के लिए अशेष शुभकामनाओं सहित -

रघुवरदास शास्त्री
आचार्य (व्याकरण, साहित्य)

विषयसूची

॥श्रीगणेशाय नमः॥

॥भावश्रीः॥

[पत्रकाव्यसङ्ग्रहः]

तत्रादौ

॥१. श्रीमद्बाबागुरुभ्यः पत्रम्॥

****

कृत्वा प्रणाममथ शैलसुतासुतं तं
श्रीमच्छिवस्य तनयं शुभदं गणेशम्
नश्यन्ति यस्य कृपया सकलापदाश्च
बाबागुरोश्चरणयोः विनिवेदयामि॥१॥

पत्रम्मया विलिखितं गजरौलनाम्ना
ख्याते शुभेऽथ नगरे पटवारिगेहे
श्रीमद्गुरो! मम मनो जगदम्बिकायां
लग्नो जपाम्यहरहोऽत्र नवार्णमन्त्रम्॥२॥

यद्वा धनाय बहुधाऽपि च विप्रबालाः
यान्तीह याजकगृहेषु हि यत्र तत्र
सिध्येन्न वाऽपि यजमानमनोऽभिकाङ्क्षा

मद्दक्षिणामिह च कोऽत्र निरोद्धुमर्हः।।३।।

शुद्धं ह्यशुद्धमथवा प्रकरोति पाठं
आचारहीन उत विप्रजनोऽपि कश्चित्
स्वप्नेऽपि तस्य बहुधाऽथ निमन्त्रणं स्याद्
यद्वा परिग्रहपरो परिणश्य पुण्यम्।।४।।

दानं ददात्वथ न चेदपरेभ्य एवं
यद्वाधमेऽपि नरके परिपच्यतेऽसौ
पश्वादियोनिशरणो भवताच्च कीटो
याति क्व लोक इति नैव नरो विदन्ति[1]।।५।।

श्रीमन्! मया तु बहुधा निजशक्तिमाप्य
शास्त्रस्य तत्त्वमपि वा हृदि चिन्तयित्वा
एतद्धि तथ्यमलभीति च दानलोभात्
"विप्रः परिग्रहपरोऽधमतां प्रयाति" ।।६।।

यद्वा भवद्भिरपि नैकसमैः प्रबुद्धा
श्शाब्दादिकैः मुहुरहो जगति प्रमाण्याः

---

[1] पूर्वश्लोकेन सहान्वयः कर्तव्यः। य आचारहीनोऽशुद्धपाठकश्च परिग्रहग्रहणेऽग्रणी विप्र इति पूर्वश्लोके, ततश्च परश्लोके – स चेद्दानमपरेभ्यो (विप्रादिभ्यो) न ददाति, तर्हि स मृत्त्वा नरकादिषु पच्यते, पशुर्भवेत्कीटो वेति कुत्र दुर्गतिं यातीति सामान्यजनाः न विदन्ति। (भवादृशश्शास्त्रिणस्तु विदन्त्येवेति लभ्यार्थः)

धर्मस्य तत्त्वसरणाद्विमलीकृताश्च
बाबागुरो वयमिह प्रमुदम्प्रयामः ॥७॥

वार्तामिमामहमहो विनिवेदयामि
आदिष्ट एव भवताऽऽगतवान् प्रहृष्टः
श्रद्धायुतस्य पटवारिजनस्य गेहे
दुर्गास्तवैः नवदिनान्यथ यापयामि ॥८॥

सौम्यस्वभावसरणाद्द्विजवृन्दमान्यो
श्रद्धाभिषिक्तमनसा भजनेषु रक्तः
श्रीमोमराजपटवारिजनोऽम्बिकायां
भक्त्यैकभावुकरसेऽत्र निमज्जितोऽस्ति ॥९॥

अस्माभिरत्र भवतां तपसां च वार्ता
गङ्गादिलग्नगतिभिश्चरणस्य कीर्तिः
प्राप्रथ्यते प्रतिदिनं शिवदञ्च कर्म
तेनैव मोद्यहृदयैः नवरात्रमेति ॥१०॥

शोधे प्रबुद्धगतिधृद्भवतां कृपैव
शास्त्रेऽपि सूक्ष्ममतिधृद्भवतां दयैव
धर्मेऽपि तिष्ठति मनो भवतां प्रभावैः
सद्दक्षिणां परिलभे भवदाशिषैव ॥११॥

सद्वृत्तिमेव च गुरो! परिलभ्य मोदं
यातीति निश्चितधिया प्रतनोमि यत्नम्
चेद्राजकीयपदमालभते जनोऽयं
धीमत्सु पूज्य! तदहो भवतां कृपैव ।।१२।।

नो विस्मरामि भगवन्! भवता कथं वा
त्यक्त्वा स्वकीयभजनं ह्यपि पाठितोऽस्मि
सर्वं प्रयत्नमपि ते मम शास्त्रहेतुस्-
त्वज्जीवनं हि सकलं परमार्थसेतुः ।।१३।।

वार्ता पुनश्च बहुधाऽथ पृथक्त्वमेति
कुर्वन्नितोऽपि कमलादिजपम्मुहुश्च
सञ्चिन्तये नरवरे क इह प्रमादः
शास्त्रात्पृथग्भवति वै द्विजमण्डलं हा ।।१४।।

दुस्सूचनाऽपि पुनरेव मया श्रुता या
सत्यं किमस्त्यपि वदेच्छ्रितधीरभावः
प्राचार्यतां परिलसन् द्विजशास्त्रलग्नो
"वीरेन्द्रनामकसुधीश्शिवलोकमाप्तः"।।१५।।

यो वा सदा नरवरे धृतभक्तिभावो
यद्वाऽष्टमीप्रतिपदासु समेति मोद्यः
छात्रेषु मित्र इव, हाथरसादिहत्यैः

विप्रैः प्रणम्यचरितश्शिवलोकमाप्तः ।।१६।।

मर्यादयैव भवता सह चर्चति स्म,
यो वै भवद्गुणगणैरभिरञ्जितश्च
गङ्गाशिवश्रुतिषु भक्तिसरो द्विजो यो
"वीरेन्द्रनामकसुधीश्शिवलोकमाप्तः"।।१७।।

सर्वेऽपि नैजचरितं परिदर्शयन्ति
यद्वा "महान्त इव" वेशमहो धरन्ति
श्रीमान् भवान्[2] न हि तथा द्विजमित्रमानी[3]
"वीरेन्द्रनामकबुधश्शिवलोकमाप्तः"।।१८।।

यो ज्योतिषापि नगरे प्रथितो द्विजेषु
मान्योऽभवत्स्वसरलैरपि सद्विचारैः
अत्यन्तमार्दवगुणो हृदयैः दयालुः
वीरेन्द्रनामकबुधस्स दिवङ्गतः किम् ।।१९ ।।

नेदं वयोऽस्य विबुधस्य च नाकमेतुं
युक्तं,द्विजान् विरहदुःखजले निपात्य
भो त्वां विना नरवरे न तथास्ति हासो

---

[2] भवान्-बाबागुरुः

[3] द्विजान् (शिष्यान् अपि) मित्रवत् मन्यते तच्छीलः- वीरेन्द्राचार्यः।

यादृक् सुधीवर भवानकरोत्सदैव ।।२० ।।

तत्त्वानि त्वं हि गिरया परिहासमध्ये
सञ्जल्पयन्निव च सत्यमहो विभर्षि
यद्वै पचौरिगुरुवत्प्रतनोसि मोदं
वीरेन्द्रविप्र तव वै स्मृतिरेव शेषा ।।२१ ।।

विस्मर्तुमर्हति जनो न हि कोऽपि चात्र
तां ते छविं स्मितमुखं व्यवहारतां वा
कुर्तापजाम-परिधानयुतं समेतं
जाने न शीघ्रमिव नाकमयाद्भवान् हा ।।२२ ।।

हाऽसौ प्रवर्धत इह द्विजशास्त्रहानिः
हा हा प्रवर्धत इदं यवनैकराज्यम्
म्लेच्छैरिहत्यवसुधाऽपि च मांसकाद्यैः
दुष्टीकृताऽप्यहरहोऽथ कुकर्मशीलैः ।।२३।।

वार्ताऽस्ति मोदजननी परमं सुखं वा
योगीसुराज्यमथ चोत्तरसुप्रदेशे
वर्तेत वाऽद्य यवनैः परिचालितानि
हत्यागृहाणि च गवामयितानि नाशम् ।।२४।।

"इफ्तारपार्टि" यदिह प्रतियोज्यते स्म

दुष्टैः सपाप्रभृतिभिर्यवनैकपक्षैः
योगीसुराज्यनवरात्रयुतेऽद्य काले
भोज्यं फलस्य भवतीति निशम्यते वै ।।२५।।

कैश्चिच्च यावनजनैः धरणीप्रभारैः
म्लेच्छैश्च मांसमुदितैश्च कदर्थिभिश्च
योगीविरोधकरणैः परियाच्यते वै
हत्यागृहाणि न निषेधपथं व्रजेयुः ।।२६।।

वाञ्छन्ति धेनुवधमेव च यावनाश्च
हिन्दूजनस्य सततं परिघातनञ्च
श्रीभारतस्य विभुतां परितोऽर्थयन्ति
तस्मान्निशादिनमहो वपने[4] रतास्ते ।।२७।।

वर्षादिनेषु परिवर्धितकीटकानि
ग्रैष्मेषु शीतदिवसेषु च यान्ति नाशम्
तद्वत्सनातनसुधर्मविघर्मतप्तो
नष्टीभविष्यति ह वै यवनैककीटः ।।२८।।

हिन्दूजनस्य जगतीह विलोक्य चाल्पां
सङ्ख्यां,मनस्यपि च मे प्रभवेद्विचारः

---

[4] सन्तानबीजवपने रतास्सन्तीत्यर्थः।

जम्बूकसम्प्रभृतयो बहवो वनेषु
न्यूनाः भवन्ति हरयश्च तथापि राजः।।२९।।

तस्माद्बिभेमि न गुरो! यवनात्कुकीटाद्
वक्तुं तथापि च यते निजधार्मिकेभ्यः
सङ्ख्यां च सर्वजगति प्रतिवर्धयध्वं
"सङ्घेऽस्ति शक्तिरिति वृद्धजनाः वदन्ति"।।३०।।

राणाप्रताप इव नैव समेऽपि वीराः
नो चन्द्रशेखरसमत्त्वमयन्ति चान्ये
नैवं भवन्ति सकलाश्च शिवाजिराजः,
हिन्दो! निजं सुकुलतां परिवर्धय त्वम् ।।३१।।

सर्वं त्विहास्ति कुशलं भवतां कथं वा,
सर्वं हि पत्रदिशया द्विजराड् वदेच्चेत्
धन्यत्त्वमेमि गुरुवाचमहं त्वधीत्य
धीमद्विचारसरितास्ववगाहितश्च ।।३२।।

आध्यात्मिकेऽथ भवतां श्रुतिनिध्वनेऽस्मिन्
विद्यालये कुशलशासनशासिताश्च
शास्त्रे रताश्च बटुका उत कर्मकाण्डे,
श्लोकैरसौ द्विजजनः प्रतिबोधनीयः।।३३।।

रात्रौ द्वितीयदिवसे नवरात्रकाले
पत्रं विलिख्य पटवारिजनस्य गेहे
सम्प्रेषयामि गुरवे सकलप्रदात्रे
कोटिप्रणामततयोऽपि च सन्तनोमि ।।३४।।

मोदार्थं चैव काव्यानामभ्यासार्थं मयाऽधुना ।
लिखितम्पत्रमेतद्वै गुरवे चार्प्यते द्रुतम् ।।३५।।

प्रेषको हिमांशुगौडः
लेखनसमयो दिनाङ्कश्च - ८-३० रात्रौ, २९-०३-२०१७
स्थानम् – गजरौलानगरे ।

॥ २. श्रीमत्पटवर्धनपचौरीगुरूभ्यः पत्रम् ॥

****

श्रीमन्! श्रौतगतैकलक्ष्यनिरत! स्वीयैः मनोभावनैः
पूज्यश्चैव विभिन्नलोकघटनावार्तां प्रकुर्वन् गुरो!
स्वास्थ्यं यद्यपि सुस्थिरं कथमिव स्याद्वृद्धतानिर्भरम्
किन्त्वाचारगतस्स्मितास्यविदितस्यानन्दतां कामये ।।१।।

त्वां वै देवनिदत्तधीभिरखिलं भूयश्चमत्कारिणं,
विद्वद्गोष्ठगरिष्ठशिष्टजनता आकर्षयन्तं द्विजं,
आङ्ग्लैस्संस्कृतभाषणैरपि सदा सञ्चिन्तनैः बोद्धृणां,
हृद्याकाशविकासभासिपुरुषं गौडाः नमस्कुर्महे ।।२।।

के वाऽहो "सरितां" मुदाऽद्य भवते संश्रावयन्ति द्विजाः,
के वा "नश्तर"लेखपाठकरणात्त्वन्मोदसंवर्धकाः,
के वाऽप्युष्णसुपेयमेव ददति प्राभातिकीं काङ्गडीम्,
वस्त्रक्षालनतत्परश्च भवतां को भाग्यभाग्भ्राजते।।३।।

के वा सांयमितो दिनेऽपि भवतस्साहाय्यकारिद्विजाः,
के वा यष्टिरिवाचरन्ति जरसः,सन्तोषदाः बालकाः,
मन्दं मन्दमहो तवास्ति गमनं श्रीराजरानीगृहं,
भोक्तुञ्चाऽऽलपितुं, ब्रजेश इति किं शिष्योऽद्य सन्नाययेत्।।४।।

यद्वा स्थानकदेवतेति[5] भवता सम्प्रोच्यते प्रायशः
सोऽस्मच्छाब्दिकशास्त्रदायिपुरुषः "बाबागुरुः" यश्च वै
तेभ्यो मे नतयो निवेद्य मतिमन्! पूजार्थबिल्वान्यपि,
भोपाले वसतीति पत्रमलिखद् गौडो हिमांशुर्वदेत् ।।५।।

खेलेन्द्रश्च विनोदनीरजजनौ शिष्याः पुरा सेविनः
हेमन्तश्च बृजेश एवमिति यस्स्यात्कर्मवीरोऽथवा
सर्वेऽप्यत्र भवत्प्रशान्तनिलये सौख्येन संवासिनः
आयाताश्च गताः भवत्स्मृतिसमुल्लासैकहासाः द्विजाः।।६।।

किं वाऽद्यापि च जाह्नवीं प्रतिवजेन्मध्याह्नकाले भवान्?
यद्वा चर्चनमोदनैरहरहः कालस्समायाप्यते ।
भोज्ये वा तुलसीं क्षिपन्नपि भवान् कैर्ब्राह्मणैर्लोक्यते?
आङ्ग्ले भागवतं पठंश्च चतुरः कैश्चञ्चलैश्श्रीयते ।।७।।

भोज्यार्थं बत यद्यपीह यतयो धावन्ति चेतस्ततः
पात्रास्यै बहुदक्षिणार्थमपि ये क्लिश्नन्ति भूयो मिथः
दृश्यं तद्धि बिहारघाटगमनाद् वा कर्णवासादिषु

---

[5] श्रीपचौरिगुरुणा प्रायशश्श्रीबाबागुरुः स्थानदेवता इति प्रोच्यते। यतो हि बाबागुरुर्नरवरं त्यक्त्वा नान्यत्र याति, गङ्गाभक्तिकारणाद् वृद्धिकेशिशिवानुरक्तित्वाच्च। अत एकस्मिन्नेव स्थाने निवासत्त्वाद् पचौरिगुरुमते ते नरवरस्य स्थानदेवतास्सन्ति। इह छान्दसः पारवश्यात् स्थानदेवतेत्यस्य स्थानकदेवतेति कृतम् (स्थानमेव स्थानकमिति)। यद्यपि पचौरिगुरोरपि वयसोऽधिकः कालोऽत्रैव व्यतीतः। ते स्वप्रतिभाभिरद्भुताचरणैश्च जनैर्देवदूत इत्युपाधिं गताः। यथा चोक्तं श्रीबाबागुरुणापि – फकीराबादाख्ये
विमलजनजुष्टेऽत्र विपिने, विनोदार्थं स्वस्यापरजनहितार्थं पुनरपि। बहुज्ञेनोद्बोधाद्
व्यरचि भवनं जीर्णवपुषा, पचौरीति ख्यात्या प्रथितसुरदूतेन विदुषा।।इति।

दृष्टश्चात्र जनेन, किं तदधुना संलोक्यते कुत्रचित् ।।८।।

आत्मारामशुभाश्रमेऽथ बहुधा श्रीटाटियाकाश्रमे[6]
सीतारामसदाश्रमेऽपि मतिमन् यद्वा भृगोः क्षेत्रके
कुट्यां वाऽप्यथ साङ्गवेदभवने बाबागुरोराश्रमे
चेद् गोपालगिरौ भवेद् यतिजनैर्भोज्यार्थमागम्यते।।९।।

सर्वं मोदकरं सुदृश्यमथ मे चाक्ष्णोः पुरो वर्तते
नानारावकरैस्सदा हरहरेत्युच्चारणागुञ्जकैः
भण्डारास्थलमत्र[7] तत्र निखिलं विप्रैस्समुल्लासितं
दृष्टं जीवितमेव वा दशसमैश्शास्त्रादिपाठैस्सह।।१०।।

त्रयोदशश्राद्धसुभक्षणाय को यास्यतीति प्रतिचिन्त्यमाने ।
रिङ्कू च तत्रोद्भवतीति मुख्यः, त्रयोदशाचार्य इति प्रसिद्धः।।११।।

धनाशानिर्बद्धो धनिकमृतकस्येह सदने
गतः भोक्तुं रिङ्कू ह्यधिकदधिपानार्थमपि च
स वै राधे जीतू हसनपटुयोगेश इति वा
समे श्राद्धे चैतेऽप्युदररुजया शौचमयिताः[8]।।१२।।

---

[6] टाटिया एव टाटियाकः , तस्याश्रमे टाटियाबाबाश्रम इत्यर्थः ।

[7] भण्डारा इत्याख्यं भोज्यायोजनं यत्र भवति तत् स्थलमित्यर्थः ।

[8] समे - सम्पूर्णे । श्राद्धादिष्वधिकभोजनकरणादुदररोगप्रसक्तिस्तेन च शौचार्थम् अयिताः गता इत्यर्थः ।

सदा शान्तिख्यातां मदनसदनस्यैकभवने
निवासं कुर्वन्तीं प्रतिदिनमहो होममपि च
जपन्तीं तां वृद्धां प्रणमत इमौ वै द्विजजनौ
बुधैः जीतूरिङ्क्वोः प्रियपदमताऽम्बा[9] निगदिता।।१३।।

स्वदेशस्सदैवं नरौराऽऽश्रमे तां प्रणम्य प्रभाते ददाति स्म चायम्
शिवस्य प्रसादं प्रदोषे वितीर्णं करोति स्म पूर्वं कुटीरद्विजेभ्यः
।।१४।।
भोपालस्थे हि संस्थाने नरौराश्रमसुस्मृतिः ।
उदिता छात्रकालस्य ततश्चात्र निवेदिता ।।१५।।

लिखितम् – जुलाई, २०१७
स्थानम् - भोपालपरिसरच्छात्रावासे

9 प्रियं मतं पदं यस्याः तादृशी अम्बेत्यर्थः ।

॥ ३. आचार्यजीतवे पत्रम् ॥

****

जीतो! कथं प्रचलति श्रुतिशास्त्रचर्या
मन्त्रार्थिनी कथमहो तव तन्त्रचर्या
देवस्य सिद्धिरिह वा भवतीति शङ्का
प्रेतस्य मन्त्रमपि भो द्रुतमाजप त्वम् ॥१॥

मौनी भवेः तव पुरा हि समर्जिता या
विद्या मयाऽत्र निगदामि महारहस्यम्
रात्रौ वने नरवरस्य च याहि घोरे
नग्नीभवन्नथ जन प्रजपेश्च मन्त्रम् ॥२॥

केचिद्भयङ्करशरीरधरास्तथान्ये
त्वां भाययन्ति हसनै रुदितैः परे वा
झञ्झाप्रवातपरिवर्षितमेघमध्ये
साक्षाद्भविष्यति महाँस्तव भूतराजा ॥३॥

तत्कालमेव परिलक्ष्यमियाद्भयङ्कृत्
त्वं वामहस्तकृतकृन्तितसप्तबिन्दून्
भूमौ निपात्य वदसि त्रिवचश्च तस्मै
चेद्वै वशीभवति,तद्विधिरस्ति चास्य ॥४॥

जाने त्वदीयमनसो नवकार्यवृत्तिं

शाब्दे तु शून्य इव ते भवतीह रागः
किन्तौ श्रुतौ च परिवर्धिततन्त्रलोके
त्वं नव्यगत्यभिरतः परियासि सिद्धिम् ।।५।।

श्रीमद्वशिष्ठसदनस्य तथैकभागे
पार्श्वे स्थितस्य मदनस्य कुटीरभागे
पूर्वं हि शान्तिरपि होमजपैः पवित्रं
कुर्वत्यहो चिरमिहावसति स्म कक्षे ।।६।।

अस्मिंस्त्वमद्य वससि श्रितजाप्यकर्मन्
श्रीनर्मदेश्वरकृपापरिपूतचित्त
तन्त्रैः वशेऽपि बहुधा नवकामिनीनां
कालं स्वकं नरवरे परियापयेश्च ।।७।।

वार्तामिमाम्मम सदा हृदये विधेहि
काले कलौ न सरलं धनदं च कर्म
क्षुद्राणि वाऽपि यजमानजनस्य चाटु-
वाक्यैर्धनान्यत इदं परिवर्जय त्वम् ।।८।।

त्वं तन्त्रसिद्धिबलतो वशने समर्थो
बोभोष्यसीह धनिनामपि कामिनीनाम्
चित्तानि, कर्तुमथ सर्वमहो बलीयान्
सम्प्रथ्यते नरवरे तपसाम्प्रभावः ।।९।।

प्रेतस्य मन्त्र उत योऽस्ति मया प्रदत्तस्-
तं वै निशीथसमये जप वीतनिद्रः
वर्षे भविष्यसि च निशाचरडाकिनीनां
स्वामी,त्वमेव नररूपकभूतराजा ।।१०।।

किन्तु क्षणं हि शृणु नैव परस्य वित्तं
खाद्यं फलं न च गृहाण जलं कदाचित्
एकान्तमेहि जपने भव सावधानः
रक्षादिमन्त्रपरको विधिमाचरेश्च ।।११।।

यद्यद्धि शास्त्रगदितं सममाचर त्वं
मेघैर्भृते नभसि चान्धतमःप्रजाते
कोलाहलैर्विविधरूपधरी च यक्षी
धावन्त्यहो तव समीपमवातरेत् सा ।।१२।।

अश्वत्थलम्बवपुषा प्रकटीभवेच्चेत्
रक्ताम्बरेण परिवेष्टितमस्तका सा
नृत्यन्त्यथोच्चरवरोदनभीतिहासा
हिंस्रैश्च जन्तुभिरहो क्वचिदावृताऽपि ।।१३।।

न त्वं बिभेहि बलिमांससुरादियुक्तं
देयञ्च तण्डुलमथ श्रितशर्करञ्च
इत्रैस्सुगन्धिकुसुमप्रणिपातपूर्वस्-

तां यक्षिणीं स्ववशने प्रभवेस्समर्थः।।१४।।

इत्थम्मया निगदितं तव तन्त्रकर्म
तेनैव सिद्धिमथ वाऽऽप्य सुखन्तनुष्व ।
घोरा घटा नरवरे नभसीह लोक्या
नक्षत्रकालमपि ते च पृथग्वदामि ।।१५।।

उल्लूकस्य समागृह्य विष्ठामैरण्डतैलके ।
सङ्घृष्य मन्त्रसंयुक्तस्सिद्धं भवति तत्ततः ।।१६।।

यस्याङ्गे निक्षिपेद्बिन्दूनदृश्यो जायते क्षणात् ।
एतत्कुरुष्व सश्रद्धो लभस्व स्वीयचिन्तितम् ।।१७।।

एवं हिमांशुरिह ते लिखति प्रपत्रं
तन्त्रादिबोधकमयं कुरुते च चित्रम् ।
विश्वस्तधीरमनसा पुरुषेण शक्तिस्-
संलभ्यते कुरु शिवार्चनमष्टगन्धैः ।।१८।।

लेखनसमयो दिनाङ्कश्च – ९-३० पूर्वाह्णे, ३०-०३-२०१७,नवरात्रकाले।

स्थानम् – गजरौलानगरस्थे यजमानगृहे ।

॥ ४. डॉ.श्रीओमशर्मणे पत्रम् ॥

****

श्रीओम! विप्र भवतो हि निशम्य चर्चां
देवप्रयागगतशिक्षकशुद्धवृत्तिम्
तीर्थे सुवास इति मोददहेतुरस्ति
गङ्गा सुशीतलजला प्रवहेच्च यत्र ।।१।।

शास्त्रे दशाधिकसमैश्च भवान् रतोऽस्ति
बाबागुरोरपि निशासु दिनेषु भक्त्या-
ऽधीत्य प्रकर्षपदवीमथ वाऽऽप्य विप्रो
ज्ञानेन्द्रशब्दपुरुषादपि लब्धशब्दः।।२।।

सद्भारतेऽपि निखिले प्रथितं यशश्च
यस्याऽथ शाब्दिकमणेः ब्रजभूषणस्य
ओझेति राष्ट्रपतिमानितनामकस्य,
तस्माद्गुरोरपि भवान् पठितोऽस्ति वर्षैः।।३।।

दृष्ट्वा हि ते नरवरेथऽथ विचित्रचर्यां
गङ्गावगाहनविधौ तरणे गतिञ्च
सङ्कूर्दनस्य सुविधौ पदचालनञ्च
तर्ता द्विजस्त्विति भवन्तमहो वदन्ति।।४।।

धृत्वा जटामपि कदाचिदसौ प्रलोक्यो

यो लुञ्चितैरपि पुरा लसति स्म केशैः
यद्वा शिखी न हि कदापि शिखाविहीनः,
खानामिरस्य गजनीव शिरो त्वदीयः[10]।।५।।

त्वद्ब्रह्मचर्यपरिधारिबलिष्ठरूपं
वारीव दुग्धमपिबच्च भवान् निशासु
शीर्षासनादिचरणादुषसि द्विजैश्च
लोक्यस्तृतीयचयगोऽपि मुदा प्रकूर्दी ।।६।।

वर्णेन गौर इति वा तनुषा बलिष्ठो
वाचा मधुम्भृदपि वाऽप्यसि धीरचित्तः
त्वं चञ्चलत्त्वमयसेऽपि गभीरचित्तश्-
श्रीओम! विप्र! भव शास्त्ररतस्सदैव ।।७।।

त्वच्चिन्तनैरपि मनोगतशुद्धभावैर्-
विप्रेषु मित्रगणगोऽपि निजप्रभावैः
अस्मत्प्रशंसनपरोऽसि समेषु विप्र!
त्वद्गुण्यमुग्धसरणैस्सुजनैः प्रशंस्यः ।।८।।

त्वद्भाविभावनविधावहमेव पूर्वं
श्रीपूर्वनामलसितो धनतां समेति

[10] एकवर्षं यावदासीदिति शेषः।

उक्त्वाऽद्य निश्चितवचस्त्वमहो प्रयामि
संस्थानवित्तमुदितोऽद्य जनैर्विलक्ष्यः ।।९।।

त्वं नीरजेन च विनोदजनेन पूर्वं
खेलेन्द्रनामकजनेन कदाचिदेवम्
नानाविनामकरणैरपि नो विचाल्यो
नैवोपहासपदमेसि पचौरिणाऽपि ।।१०।।

दत्तं प्रकोष्ठमथ ते गुरुणा यदेवं
निम्बाश्रये सुरसरीशुभदर्शनञ्च
यस्माद्भवेदपि च बिल्वतरोस्सकाशे,
तस्मिंश्च साधुरवसत् कपिमन्दिरस्य ।।११।।

शब्दादिचर्चनरतो भवतां सकाशे
त्वत्सङ्गतौ ह्यपि पुराणगता च चर्चा
प्रेतैः कृतो बहुसमैस्समुपद्रवो यः,
रात्रौ रहस्यपरकोऽन्धतमसीव चोक्तम् ।।१२।।

चेड्डाकिनी भ्रमति खे तव कक्षपार्श्वे
कूपे वसन्त्यपि च या बहुवत्सरैश्च
विप्रैरहो विविधरूपधरी विलोक्या
तस्यास्सुरक्षय निजं कपिचिन्तनेन ।।१३।।

प्रश्नैस्त्वमेव बहुधा विबुधैस्सुपृष्टैश्-
चिन्तारतो प्रभवसीति गभीरभावः
जागर्ति शाब्दिकरसे तव वै पिपासा,
श्रीओम मन्यत इह प्रतिशब्दमानी ।।१४।।

।।। ५. प्रो.एम्.चन्द्रशेखरमहोदयेभ्यः पत्रम् ।।।

****

श्रीचन्द्रशेखरगुरो! भवतां सुचर्यां,
प्राचार्यतां परिवहन्तमथापि दृष्ट्वा
छात्रप्रमोदकरणीं सरणीं प्रयान्सन्,
विद्वन्! सुखत्त्वमिह भो लभतां सुकार्यैः।।१।।

चेद्राजनीतिपटवो बटवोऽत्र भान्ति,
तेषां सुसम्मतवचांसि मुदाऽऽकलय्य
छात्रे हितैकपरिभाषणसुस्वरूप!
त्वं सर्वविप्रशुभकारिसुवारिरूपः ।।२।।

संश्रुत्य विप्रगदितामपि चित्तपीडां,
तेषां निवारणपरो भव चन्द्रनामा।
कैश्चिद्द्ध्यकारणजनव्यथनप्रमोदैः,
विभ्रामयेन्न भवतां हितचिन्त्यचित्तम् ।।३।।

श्रीमन्!भ्रमन्ति बहवस्त्विह दुष्टचित्ताः
ये च्छात्रशोषणपरां परिकुर्वते वै ।
नीतिं,विहाय, बुध! भोऽथ तदीयसङ्गं

छात्रप्रियैकपदवीमथ याहि चन्द्र ।।४।।

यद्वन् "मोहब्बत" इति प्रथिते सुचित्रे[11],
या वाऽमिताभकृतगौरुकुलस्थचर्या।
प्राचार्यरूपमिह तत्परिदर्शयन् भो!
सर्वेषु शास्त्रिमनुजेषु विभाति चन्द्रः ।।५।।

श्रीमन्! समेऽप्यथ सुखाय सदा यतन्ते,
च्छात्रास्तथैव गुरवोऽनुदिनं प्रबुद्धाः।
किन्त्वाकलय्य सकलञ्च शुभञ्च शीघ्रं,
यस्सर्वतोषकरणस्स सदैव मान्यः।।६।।

क्वाऽसौ हिमांशुरिति गौड इति प्रथाधृत्,
क्वाऽऽकाशरात्रिपरिदर्शितरूपचन्द्रः।
श्रीचन्द्रशेखर इतीह बुधः क्व लोके,
सर्वेऽपि नैजपरिसंस्थितिलोकरूपाः।।७।।

येनैव मार्गपरिवर्तनसंसरेण,

[11] मोहब्बते इत्याख्ये चलच्चित्रे या अमिताभबच्चनाख्यस्याऽभिनेतुः चर्याऽस्ति तथैवानुशसनप्रिया गभीररूपा च भवतोऽपीति भावार्थः ।

च्छात्रप्रियैकपदवीमथ वाऽऽप्नुयाद् भोः ।
तत्स्वीकृतैकपरिलक्ष्यनिधृत्सु विद्वन्!
प्राचार्यरूपमहनीयगतिस्सुवाप्या ।।८।।

नो वै मयाऽप्यनुदिनं भवतां सुजीव्यं,
संलोक्य चानुभवनैरुदघाटि वाग् वै।
श्रीसंस्कृतार्पितसमस्तसुजीव्यपुष्पा-
ऽहो चन्द्रशेखर! भवान् परिमोदितस्स्यात् ।।९।।

यन्न्यायशास्त्रपरिधारितधीवपुष्क!
शिक्षासुशास्त्रपरिचिन्तितसौख्यरूप!
नानासुनाटकनिदृष्टसुकृष्टशिष्टा-
ऽहो चन्द्रशेखरगुरो! परिहर्षयेह।।१०।।

उत्तरञ्चास्य पत्रस्य भवता पद्यरूपके ।
लभ्यं चेच्छास्त्रमोदिन् भो जरीहर्षिष्यति द्विजः।।११।।

- हिमांशुर्गौडः, शोद्धा शाब्दिकः, लेखनकालो दिनाङ्कश्च - ३.०० अपराह्णे,
२४-७-२०१७, रा.सं.सं. भोपालपरिसरे,कवि.भा.छात्रा.१०४ सङ्ख्याके कक्षे ।

||| ६. प्रो.हंसधरझाभ्यः पत्रम् |||

****

श्रीमज्ज्योतिषखप्रयातृपुरुष ! श्रौतादिमार्गे रत
चास्मत्संस्कृतभाषणैकपदवीप्राप्तप्रमोदो भवान्
यद्वा श्रेष्ठजनैरथाप्यभिजनैस्संवन्द्यते नन्द्यते
श्रीमद्धंसधराय चैव भवते भूयो नमस्कुर्महे ।।१।।

झा झा झेति समुच्चरन्ति मनुजाः यच्चोपनाम्नादिकम्
तद्वै विप्रकुले बिहार इति विख्याते स्थले श्रूयते
दारिद्र्यादपि च श्रमैस्स्वमतिभिस्सारस्वतोद्भासिनः
विद्वान्सो बहवोऽथ भारततले भ्राम्यन्ति गर्वैर्द्विजाः।।२।।

आश्चर्यं महदेव तिष्ठति मनत्स्वाविर्भवेन्मोदता
अस्मिन् घोरकलौ हि खेचरबुधस्साक्षाच्च यः खेचरः
भ्रान्तिं खण्डयतीति वेदनयनं शास्त्रं हि हंसो मतः
तद्धृत्वा नभसि प्रयाति गतिमान् तस्मादहो हंसधृत् ।।३।।

प्राणायामकरैर्द्विजैः प्रतिदिनं यद्ब्रह्म सन्ध्यायते
श्वासानां गमनागमैः प्रतिभवेत् सोऽहञ्च हंसश्च तत्
एतज्जीवनमत्र धीष्वपि नृणां यो बोधयंस्तिष्ठति
तस्माद्धंसधरेति सर्वविबुधैरुच्चैरसौ घुष्यते ।।४।।

विष्णोर्वक्षसि विप्रपादरजसश्चिह्नं हि यल्लोक्यते

तद्वै स्याद्भृगुपादघातकरणाल्लोकेषु सम्प्रथ्यते।
लक्ष्मीः क्रुद्ध्यति च द्विजेभ्य इति वा हेतुर्दरिद्रत्वगः
तस्माद्भार्गवसंहितां यदि धरेच्छापोऽप्रभावी भवेत् ।।५।।

निन्दासंस्तुतिवर्जितोऽपि मतिमँश्चाकृष्य गुण्यैर्जनः
दोषैर्वाऽपि च तत्परोऽत्र भवतात्सद्दुष्कुलानां नृणाम् ।
धीराणाञ्च महात्मनाङ्गुणगणैस्सङ्गायनैः पाव्यते
जिह्वाऽनेन सुहेतुना द्विजवरं स्तौत्यत्र गौडोऽस्त्यसौ ।।६।।

संस्थानेऽत्र मुदा सुधारसयुतैश्शास्त्रैस्समुन्मोदिताः
वर्षास्वम्बुसमार्द्रदेहमनुजाश्चोदारचित्ताश्च ये ।
भोपालस्थसमस्तबोद्धृपुरुषैस्संस्थानमाकाङ्क्ष्यते
तस्माद्धीधर! धैर्यधारिधनधृच्छ्रौतैस्समुद्बोधय ।।७।।

चेत्काव्यैरपि मोदितं दिनमिदं साफल्यमातन्यते
चेद्गङ्गाजलगाहनैरखिलजीव्यं शोकतस्तीर्यते ।
चेद्भोपालनिवासकैरहरहो माङ्गल्यमाकृष्यते
श्रीमद्धंसधरोऽप्यनेन मनुजैस्संरञ्जितो दृश्यते ।।८।।

विप्रोऽयं हि बिहारजात इति मोद्यन्नूतनं लक्ष्यते
तस्माच्छास्त्रसुरक्तभक्तिमतिधृच्चोद्यो नवीनोऽप्यहो ।
यद्वा वेदसुनेत्रदृष्टसकलश्रौतार्थलोकश्च यः
तस्मै हंसधराय विप्रतनयाः भूयो नमस्कुर्वते ।।९।।

श्रीमन्नैव समेऽपि चेह विबुधास्त्वद्वद्भवन्त्यत्र वै
सर्वे स्वार्थनदीषु लोभवशतश्चाकण्ठमग्ना इह ।
धिग्धिक्संस्कृतदत्तवित्तमुदिताः नास्मै यतन्ते क्वचित्
न श्रौताम्बुपिपासितेभ्य इह ये सम्पाययन्त्यर्थिनः ।।१०।।

या वै पत्रपरम्पराऽत्र विबुधैस्सौहार्दयुग्भावुकैः
मित्रेभ्योऽथ गुरुभ्य एवमधिकं सन्तानिता पौर्विकैः।
तस्याभाववशादनेककवयो बुद्धास्तथा शास्त्रिणः
संलोक्यापि परस्परं सुरतिशून्याः प्रेमहीनास्समे ।।११।।

श्रीमद्दर्शनमत्र यत्कृतमहो पुण्यैर्मया मन्यते
विप्रोऽयन्तु सदा मुदा “नरवरे” गङ्गावगाहे रतः।
काशी यद्यपि वाञ्छयैव मतिमन् पूर्वं मया नोषिता
किन्तु क्षालितधीमलश्रुतिधराद्बाबागुरोः पाठितः ।।१२।।

चेद्वाञ्छा भवतां भवेच्च मतिमँस्तस्मिन् शुभे स्वाश्रमे
ग्रीष्मे शैत्यदिनेऽथ वर्षितऋतावाविर्भवे श्रावणे
यायाद्रम्यपदेऽथ धर्मनिचये बाबागुरोश्शोभिते
शास्त्रं धर्मदिशा पठन्ति बटवोऽप्यध्यात्मविद्यालये ।।१३।।

यद्वा तद्धितसुप्तिङन्तमुदिताः नैके द्विजास्तत्र वै
केचिन्नैकजपादियज्ञकरणे मग्नाश्शिवे, दन्तिनि
केचिद्दुर्गमदुःखनाशकरणीदुर्गार्चनायां रताः

सर्वे तत्र सदैव धर्मनिरताः,भो हंस! संलोक्यताम् ।।१४।।

श्रीमन् ! शोधरतोऽप्यहम्प्रतिदिनङ्काव्यन्न हातुङ्क्षमः
मोकं रात्रिजजागरादपि सदा वाञ्छामि कर्तुन्नहि
शक्तो,भक्तिरिव प्रसुप्तमनसि प्राजागरीन्नो कदा
पत्रैश्च प्रणतैर्व्यतीतसमयो भो हंस! गौडोऽस्त्यसौ ।।१५।।

श्रीमन्नग्रेऽपि वार्ता नः पत्राद्यैस्सम्प्रथिष्यति ।
गुरो! विद्यासुरक्तोऽहं गुरौ च प्रबले सति ।।१६।।

प्रेषको हिमांशुर्गौडो,
लेखनकालो दिनाङ्कश्च – ३.३० अपराह्ने,२४-०७-२०१७,
रा.सं.सं.भोपालपरि.कविभा.छात्रा.१०४ सङ्ख्याके कक्षे ।

||| ७. पद्मश्री-अभिराजराजेन्द्रमिश्रेभ्यः पत्रम् |||

****

श्रीमन्निशम्य कवितां भवतामहं वै
हृष्टोऽस्मि संस्कृतजगद्धरिदश्व ! विप्र !
जातस्तुदादिरिति काव्यमहो श्रुतश्चेच्-
चित्ते न कस्य कुरुतेऽभिरतिं चिरस्थाम् ।।१।।

मिश्रोऽभिराज इति संस्कृतलोकसिद्धं
नाम त्वदीयमिह कोऽत्र बुधो न वेत्ति ।
यूपी-प्रजात इति चापि समानजातिः
सन्तिष्ठते भवति मय्यपि काव्यकारिन् ।।२।।

गौडो हिमांशुरहमस्मि जनोऽल्पबोधः
काव्यं सकृद्धि भवतो वपुषो समक्षम् ।
भोपालके परिसरे परिगायनेन
धन्यङ्गतोऽस्मि शृणुताच्चल चायपाने ।।३।।

अज्ञातलोकपरिवासिजनाः कदाचिद्
वाऽऽयान्ति भूतल इह प्रतिबुद्धभावाः ।
प्राच्येष्वभूत्स कविपूजितकालिदासश्-
चाद्यापि काव्यरसिकोऽस्त्यभिराजराजः ।।४।।

काव्यानि ते प्रथमदृष्टिपथानि याता-

न्यर्थानि मेऽत्र निशि चैव हिमांशुयुक्त-
नक्षत्रतारकनभःपरिमण्डितेऽपि
नेटप्रचालनरतस्य यदा हिमांशोः ।।५।।

गौडान्निरीक्ष्य मुदिताः प्रभवन्ति मिश्राश्-
शुक्लान् विलोक्य परिहृष्ट इव त्रिपाठी ।
दृष्ट्वा च कौशिकजनान् मुदिताः वशिष्ठाः
विप्रेषु नैक्यमिति मे न मनोऽनुशास्ति ।।६।।

श्रुत्वाऽपि चैव भवतां श्रुतिमद्वचांसि
काव्यानि गायनपराणि गलज्जलानि ।
धन्यो वदन्ति सुजनास्सुरवाग्रताश्च
हृष्टो विलोक्य जलधिश्च यथा हिमांशुम् ।।७।।

जानामि ते कुलपते! मनसोऽभिमोदं
वेद्मि त्वदीयकवितागतनैकभावान् ।
आनन्दितोऽस्मि भवतां नवकाव्यगीतैः
राराजते सुरगिरां हृदयेऽभिराजः ।।८।।

केचिद्वदन्ति कवयेदभिराजमिश्रस्-
तेजस्विभाषणपरः प्रवदन्ति चान्ये ।
शास्त्रेषु तीक्ष्णमतिरित्यपरे निशम्य
धन्यो भवानिति वदामि हिमांशुगौडः।।९।।

विनैव हेतुना मया सुपत्रमेतदर्प्यते
कवे! गृहाण गौडदत्तकाव्यभावनान्वितम् ।
मम प्रवृत्तिरेव वा रसान्विते प्रवर्तते-
ऽभिराजमिश्र! ते नमस्सुसंस्कृतप्रमोदकृत् ।।१०।।

विद्वद्भ्यः पत्रदाने हि रुचिर्मे वर्ततेऽधुना ।
अतः कविप्रसिद्धाय नतिरेषा समर्प्यते ।।११।।

लिखितम् – जून २०१७, स्थानम् – रा.सं.सं.सुदामातिथिनिवासे।

।।। ८. प्रो.एम.चन्द्रशेखरेभ्यः पत्रम् ।।।

(राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानस्य भोपालपरिसरस्य प्राचार्येभ्यः)

पत्रप्रकारः- व्यक्तिगतम् ।

कारणम्- न हि कश्चिद्धेतुर्विशेषः, काव्यलहर्यावेगरोधनाक्षमत्वादेवाऽलिखम्।

वर्ण्यविषयः- परिसरस्य तात्कालिकपरिस्थितीनामेव वर्णनमत्र कृतम् ।।

****

श्रीचन्द्रशेखरबुधाऽत्र भवत्सकाशे
संस्थानसंस्कृतशुभप्रथितप्रदेशे ।
भोपालरम्यनगरे सुखदे धनाद्यैश्-
छात्राः नवाशमनसा पठनेषु रक्ताः ।।१।।

केचित्सनातनसुधर्मविभासयुक्ता
आर्ये समाज उत केचिदिहापि सक्ताः ।
आधौनिकं स्थितमिदं न हि धर्मभेदो
मत्वा सुचारुगतिभिः परिलास्यमेति ।।२।।

यद्वाऽऽश्रमेषु पठितास्तु बहुप्रदेशाद्-
आयातवन्त इव चार्यसमाजकेषु ।
प्रायस्सनातनपुराणकृतार्थरागा-
रक्ताश्शिवादिसुरचित्तविभातजीव्याः ।।३।।

तेषां सदैव मनसि स्थितमस्ति चैतद्-
यन्निर्गुणोऽपि सगुणस्त्विति संविभागः ।
वेदैश्च शास्त्रघटकैश्च पुराणसाध्यैः

कृत्वाऽथ साधुपुरुषैश्श्रित एष धर्मः ।।४।।

किन्त्वार्यपद्धतिसरा इह बालकाः ये
बाल्यान्मनत्स्वपि च यैर्निभृतं च तेषाम् ।
नैर्गुण्यमेव गुरुभिस्सुरभक्तिहीनैस्-
ते ब्राह्मणेभ्य इह चेर्षरता हि केचित् ।।५।।

सङ्ख्याऽधिकाऽत्र सुरभक्तियुतद्विजानां
देवीशिवार्चकनृणां गणपे रतानाम्।
तस्माद्ब्रुवन्ति न कटूज्ज्वलिताङ्गभाषाम्-
आर्याः हि नास्तिकपथं परिपोषयन्ति ।।६।।

मन्ये बहुत्र निजधर्म इहापि दुष्टाः
पाखण्डसारणरताः धनवाप्तुकामाः।
सर्वे न किन्तु मतिमन् प्रभवन्ति तद्वत्-
सत्यं सनातनमहो न हि हेयधर्मः।।७।।

सिंहाल्प्यमत्र परिलोक्य वनेषु विप्र
जम्बूकवृन्दमधिकं रवणं चरन्तम् ।
तद्वद्धि हिन्दुहरयो जगतीह चाल्पा
ईसायिमुस्लिमसमाः बहवस्तथान्ये ।।८।।

ये नैव च प्रतिदिनं गणपं स्मरन्ति

दुर्गां न भक्तिभिरहो परिपूजयन्ति ।
रुद्रं जटाधरमिमं न हि गाङ्गवारा
सिञ्चन्ति ते कथमिव स्युरिहार्थयुक्ताः।।९।।

श्रीमन् स्वदेश इह भारतपुण्यवर्षे
धर्मेषु साम्यमिति ये कुजनाः वदन्ति ।
ते नो विदन्ति च विधर्मिकृतं कुचालं,
तेऽवाप्य नैजबलतां परिघातयन्ति ।।१०।।

श्रीमन्निहापि बहवो मधुरंवदाश्च
केचित्कटूक्तिवदनेऽपि सदैव लग्नाः।
चाटूक्तिवाचनपरास्स्वहिताय केचित्-
सर्वे स्वभाववशगाः विचरन्ति लोके।।११।।

सोऽयं हिमांशुरिति गौड इतीह विप्रः
रात्रौ समस्तसमये प्रकरोति चिन्ताम् ।
जागर्ति शोधविषयेऽपि च काव्यमोदे
रक्तश्शिवाश्रितपथे दिवसे च शेते।।१२।।

मित्रैस्सहाऽपि बहुधा व्रजतीह हट्टे
क्रीत्वाऽपि यः पिबति मोदितहृत्सुचायम्।
भोजार्किटे क्वचिदनेकजनैर्वृतो वा
विद्यार्थिभिः परिलसन्नथ सूत्रचर्चैः।।१३।।

मित्रं मम प्रियकरं हि नवीननामा
चायप्रियोऽपि बहुधा हितमार्गदर्शी।
यो ज्योतिषे स्वविषये प्रथितो द्विजानाम्
उज्जैननामनगरं स गतो विहाय।।१४।।

वृत्तिं समेऽपि मनुजाः परिकाङ्क्षयन्ति
शास्त्रेण वित्तमिह के न जनाः लभन्ते ।
श्रीपाणिनीय इति विश्वजनेभ्य एवं,
विद्यालये गत इतः परिपाठनाय ।।१५।।

आन्दोलनं प्रतिदिनं ह्यकरोच्च योऽत्र
हेतुर्भवेन्न हि भवेदधिकोऽथ वाल्पः ।
यो वै सदा मधुकरेण हृदाऽनुरक्तः,
उज्जैनपुण्यनगरं गतवान्नवीनः ।।१६।।

यस्यान्वहं विगतिभिर्मुदितो भवान्वा
दृष्ट्वा मुखं हि सकलाः मुदिताः भवन्ति ।
छात्रास्तथैव गुरवः कथयन्ति नब्बू,
चायप्रियश्शिवपुरं गतवांस्तिवारी ।।१७।।

मोट्वाख्यहोटलमिह व्रजति स्म यो वा
पातुं च चायमपि जग्धुमहो समोसाम् ।
मित्रैस्सदाऽप्यभिमतः परिनन्दितश्च

वित्तं कदापि गणयेन्न परोपकारे ।।१८।।

यश्छात्रशोषणपरस्स हि तद्विरोधी
यः क्षेत्रवादपरकस्स हि तद्विरोधी ।
शिक्षानियुक्तिकरणेऽपि च पक्षपातं,
यो वाऽऽचरेत् स कुजनस्य महाविरोधी ।।१९।।

नब्बूवदत्र न हि समेऽपि जनाः भवन्ति
आत्मोन्नतिं च परिहाय परेषु कार्ये-
ष्वासक्तचित्त इव नेटमिति प्रतीर्य
सोऽध्यापकोऽभवदहो सुहृदः प्रसन्नाः ।।२०।।

ये केवलं भ्रमितुमेव च यान्ति बालाः
यूनां महोत्सव इति प्रथिते प्रसीद्ये ।
दाक्ष्यं स्वकीयविषये न समर्जयन्ति
लाभश्च कः परिसराय तथाविधैः हा ।।२१।।

ये केरलात् परिसरात् प्रतियोगिनो वा,
चायान्ति दक्षविषयाश्चतुराश्च ते वै ।
निर्जित्य हेमपरिमण्डितवैजयन्तीं
नृत्यन्ति चेर्ष्यनयनैः परिलोक्यमानाः ।।२२।।

तस्माच्चितास्सुमतयो यदि वाऽस्मदीयात्

भोपालकात् परिसरात् युवकोत्सवेऽस्मिन् ।
ईयुस्समस्तगतिभिः परिखेलयन्तस्-
स्वर्णैरिमं परिसरं बत भूषयेयुः ।।२३।।

चेत्कूर्दनेऽपि मतिमन्निह धावनेऽपि
चेद् बेडमिण्टन इति प्रथितेऽपि खेले ।
स्वर्णं समाप्नुयुरिहापि च मल्लयुद्धे,
तस्माच्च कौशलमिमे मुहुरर्जयेयुः ।।२४।।

छात्रस्य चैकहितवादिजनास्तथाल्पास्-
शृण्वन्ति नात्महितवादिगुरूँश्च बालाः ।
तस्मात्सरेदिह च शास्त्रपरम्पराऽपि
नाम्नैव भूपतिनिदत्तधनैस्सुवाग्भ्यः ।।२५।।

सर्वाधिकं यदिह चाप्यवरोधरूपं
तत्सुन्दरीमुखविलोकनपद्धतीनाम् ।
कामार्तचित्तमनुजाश्च परिभ्रमन्ति
विद्यां विहाय, वशितुं परिचेष्टयन्तः ।।२६।।

विद्यावरोधकृदहो स्मर एष पुंसां
कल्याणरोधकरणस्स्मर एव नूनम् ।
यच्चोच्छलन्नवयुवत्त्वधरास्स्मराङ्ग्यस्-
तासां च दर्शनमहो जनयेदनर्थान् ।।२७।।

ये शास्त्रमार्गिपुरुषाः न हि योषितानां
पीनौ कुचौ स्मितमुखं च कृशं कटिं च ।
संलोक्य चैव मदनैधकचेष्टनं वै,
कामेन पीडितदशां न व्रजन्ति, धन्याः ।।२८।।

द्वित्रास्सहस्रमनुजेषु भवन्ति चैवं
ये यौवनेऽपि मदनस्य वशं न यान्ति ।
छात्रास्तु वानर इव स्मरपाशबद्धाः
विद्यां विहाय बत मैथुनतत्पराः वै ।।२९।।

नैवाङ्गना इह च सज्जनपङ्क्तिगण्यास्-
ता वै सदा स्मरकलाकलनेषु दक्षाः ।
एकेन साकमपि नो, बहुभिस्स्मरार्तै-
रेकान्तकक्षगमनं रमणं चरन्ति ।।३०।।

नो शब्दशास्त्रमुत नैव च काव्यशास्त्रं
न ज्योतिषं न हि तथा प्रपठन्ति शिक्षाम् ।
पश्यन्ति दृश्यमथ कामगतं च चित्रं,
वात्स्यायनस्य विषयेऽत्र समेऽपि लग्नाः ।।३१।।

न स्युश्च चेत् पठनकाल इमास्सुरूपाः
कामाङ्गचेष्टनरताः युवकस्य पार्श्वे ।
सर्वेऽपि तास्सुवदनाश्च विहाय नूनं

यास्यन्ति चोच्चपदमस्ति न संशयो मे ।।३२।।

यूनां च वीर्यपतनैरिह सर्वभूमी
रिक्ता न वास्ति करमैथुनकृद्भिरेवम् ।
ये कामुकीश्च युवकाः वशितुं समर्थाः
ते दीर्घकालिकसुखं रमणैर्लभन्ते ।।३३।।

काचित्तु विज्ञपुरुषं परिलोक्य योषा
स्वार्थाय तं हि विविधैः मधुवाग्भिरन्या ।
बध्नाति कामपरके निजरूपजाले
कार्ये समाप्तिमयिते न रतिं ददाति ।।३४।।

शोधप्रबन्धगतकार्यसुसाधनाय
साहित्यशास्त्रगततथ्यविबोधनाय ।
विज्ञं जनं मदनजालनिबन्धनेन,
संसाधयेन्निजहितं रतिदा हि योषा ।।३५।।

दुष्टा हि काचिदिह विज्ञनरं द्विजञ्च
कार्यं सुसाधयितुमत्र च लोभदानैः ।
'दास्यामि ते रति'मिति प्रतिबोधनेन
संशोषयेत्सुपुरुषं सरलं युवानम् ।।३६।।

कामार्तचित्तवशगोऽपि च सोऽत्र विप्रो

यो वा सदाऽऽश्रमनिवासक एव नान्यः ।
दृष्टाः न तेन दशवर्षमितं च योषाः
आयात्य चेह मदनाः परिपश्यतीति ।।३७।।

कार्ये च सिद्धिमयिते न हि साऽत्र योषा
सम्भोगकार्यकरणाय ददात्यनुज्ञाम् ।
तस्माद्व्यथातुरमनाश्छलरूपया सो-
ऽह्नो पीडितः कथमिव प्रपठेच्च शास्त्रम् ।।३८।।

दुष्टाः भवन्ति बहुधाऽपि च योषिताः याः
सर्वा अपात्रपुरुषं ह्यभियान्ति रत्यै ।
त्यक्त्वा च शास्त्रिणमहो शिवसौम्यगुण्यं
'नारी सदा हि विषमा' मुनिभिस्समुक्तम् ।।३९।।

मोदैः पिबन्ति बहवस्त्विह धूम्रचुल्लीं
राजश्रियं च गुटिकां परिचर्वयन्ति ।
चायं च शास्त्रिपुरुषाः प्रपिबन्ति भूरिः
ताम्बूलचर्वणरताः प्रवदन्ति धर्मम् ।।४०।।

केचिच्च कञ्चुकसुधौतशुभाम्बरास्स्युः
आङ्ग्लीयवस्त्रमिव वस्त्रमुदो जनाश्च ।
शास्त्रस्य बोधमिह चैव भवेत्प्रधानं
ह्याडम्बरैर्न विबुधास्तपसा भवन्ति ।।४१।।

केचिद्ध्रुवत्परिसरेऽपि च शास्त्रिविप्राः
ये प्रेतवत्प्रविचरन्ति विहाय निद्राम् ।
रात्रौ हसन्ति तमसि भ्रमपूर्णचित्ताः
भोपालभोजनगरी कविभिर्न रिक्ता ।।४२।।

पूर्वं हि भास्कर इति प्रथितस्त्रिपाठी
साकेतसौरभमिति श्रितरामकाव्यम् ।
कृत्वा समस्तकविभिः प्रणतिङ्गतोऽहो-
ऽद्याप्यस्य काव्यतनयो विदितो निलिम्पः ।।४३।।

खल्वाटतां प्रतिवजन्ति च चिन्तनैर्ये
भूतादिसंस्थितिवशादपि रात्रिकाले ।
कुर्वन्ति काव्यमपि शैवगतिश्रितास्ते
प्रेतैर्भृतं स्थलमिदं परिकल्पयामि ।।४४।।

विक्षिप्तविप्रतनयास्त्विह कुण्ठिताश्च
कामस्य चिन्तकजनाः बत शास्त्रमग्नाः ।
लग्नाः विचित्रगतिषूद्यतसूर्यकान्तौ
पूर्णाहनि प्रविचरन्ति वृथैव मन्ये ।।४५।।

अक्ष्णोश्च मे गतमिदं बत तेज एवं
क्लिश्नाम्यहं त्वहरहोऽपि च केशपातैः ।
वर्षत्रयागतजनोऽत्र गृहं विहाय

शोधैककार्यसरणं मम दुष्करं वा ।।४६।।

स्थानादहं तु मयराष्ट्र इति प्रभाताद्-
आयातवानिह च शाब्दिकमण्डलेऽस्मिन् ।
यद्वा बहादुरगढे जनिमाप्तवाँश्च
बाबागुरोर्नरवरे दशवर्षपाठी ।।४७।।

यद्ब्राह्मणस्य सकलञ्च शुभं मतं वा
श्रौतं च शास्त्रगदितञ्च पुराणतत्त्वम् ।
सर्वं हि धर्मदिशया परिपाठयेद्वै
बाबागुरुर्नरवरे विदुषाम्प्रणम्यः ।।४८।।

वेदान्तगामिपुरुषैरथ साङ्ख्ययोगा-
सक्तैश्च शाब्दिकजनैश्च पुराणसक्तैः ।
साहित्यिकैरपि जनैरिह धर्मशास्त्रे
मग्नैः,प्रणम्यपुरुषोऽथ विभाति बाबा ।।४९।।

यत्रस्थितस्य करपात्रयतेर्यशांसि
धर्मादिभाषणरतस्य सुभारतेऽस्मिन् ।
काश्यां तथाऽन्यबुधमण्डलके शुभानि
यज्ञादिभिश्च निखिले प्रथितानि पूर्वम् ।।५०।।

तस्मादहं नरवरादिति विज्ञभूमेः

गङ्गातटस्थितविभिन्नशिवालयाच्च ।
धर्मे मखे श्रुतिपुराणमुदेऽभिरक्ताद्-
बाबागुरोश्च मुखतः पठितोऽस्मि वर्षैः ॥५१॥

विद्युत्प्रभा जलकृताऽत्र च सुव्यवस्था
सौविध्ययुक्तभवनस्य कृता प्रतिष्ठा ।
श्रीसंस्कृतस्य सकलं त्विह शास्त्रपक्षं
चोद्घाट्य शास्त्रिपुरुषैर्न हि नन्दिताः के ॥५२॥

ग्रामीणजातपुरुषैरथवा पुरस्थैस्-
सौलभ्यमेवमिह नो लभते कदाचित् ।
विद्यार्थिनां बहुधनान्यपि लुण्ठयित्वा
संस्थानवन्न सुविधा भवतीति लभ्या ॥५३॥

बङ्गाङ्गदक्षिणतलेभ्य उतोत्कलाच्च
दिल्लीप्रदेशत इहोत्तरसुप्रदेशात् ।
मध्यप्रदेशनिहिते महतश्च राष्ट्रात्
भोपालसंस्कृतसरे पठितुं हि बालाः ॥५४॥

सौहार्दयुक्तसरणी यदि नैव तेषु
सम्मानपूर्णसरणी नहि चेद्विचारे ।
श्रीकानि नैव मधुरालपनैर्लभन्ते
व्यर्थं हि तन्निगदितं श्रुतिशास्त्रपाठम् ॥५५॥

नाम्नैव केचिदपि शास्त्रिजनाः भवन्ति
जीव्ये क्वचिन्न वचनं परिपालयन्ति ।
आचारलेशगुणतां न च वर्तयेद्यः
आचार्यधन्यपदवीं लभते स सद्यः ।।५६।।

'पुण्येन सज्जनसमागममालभन्ते'
इत्युक्तिरस्ति सफलेह समागतानाम् ।
विद्वन्नृणां प्रतिदिनं परिदर्शनेन
मूर्खाश्च बोद्धृपदवीमथ यान्ति सद्यः ।।५७।।

कार्यक्रमेषु बहुधा विबुधास्सुभाषैः
छात्रेभ्य उन्नतिपथं च निदर्शयन्ति ।
आयात्य किन्तु मतिमन्! मम चास्ति वाञ्छा,
आवाहयेदिह दिवाकरनामविज्ञम् ।।५८।।

तेजस्विवाक्च पुरुषो हि दिवाकरो यो
धर्मादिभाषणचमत्कृतसर्वलोकः
श्रौतादितत्परशिखाधरमोदमानश्-
श्रीशाब्दिको नरवरेऽत्र सुशोभते सः।।५९।।
प्राध्यापकं स्ववचसा मधु वर्षयन्तं
विप्रं कविं सुपुरुषं बत हर्षयन्तम्
धर्मस्य मोदनिरतं शिवमर्थयन्तं
चावाहयेत्क्वचिदिहापि दिवाकरं तम्।।६०।।

साहित्यशास्त्रविदुषस्सुसुतं स्ववाग्भिस्-
सन्तोषयन्तमखिलं मखकारिणं तम्
माङ्गल्ययुक्तवपुषं च शिवप्रियं वै
ताम्बूलचर्वणरतं हि वशिष्ठमत्र ।।६१।।

सर्वः प्रसीदति जनो यदि तस्य वाचा
श्रीपार्वतीस्तवमहो परिगुञ्जयेद्वा
मानप्रियं बुधजनप्रियमर्थभाषं
श्रीमद्दिवाकरवशिष्ठगुरुं नमामि।।६२।।

आवाहयेच्च बुध धार्मिकभाषणार्थं
काव्यादिगोष्ठसमये नवभावनाढ्यम्
प्रख्यातयाज्ञिकमहो प्रमुदा चरन्तं
पर्वोत्सवादिविधिबोधकरं वशिष्ठम्।।६३।।

यात्वाऽथ भो नरवरे बुध! पुण्यभूमौ
श्रीसाङ्गवेदभवनं श्रुतिभृद्भृतं यत्
बाबाश्रमं च हनुमन्निलयं विलोक्यं
श्रीमत्पचौरिपटवर्धनमोद्यरूपम् ।।६४।।

गङ्गाजलैः कलकलध्वनिचित्तहृद्यच्-
छ्रीवृद्धिकेशिशिवमन्दिरशोभितं यत्
बाबागुरोश्श्रुतिपुराणकृतावभासैर्-

यायाद्धि तन्नरवरं बुध! वाऽवकाशे ।।६५।।

चेच्छाब्दिकैश्च मतिमन्निह योगविज्ञैस्-
साहित्यिकैश्शिवरतैरथ यज्ञविज्ञैः
श्रीनर्मदाजलपवित्रितदेहविप्रैस्-
संस्थानमेतदखिलं परिशोभमानम् ।।६६।।

श्रीमन्! भवानिह च मध्यतलेऽत्र
कुर्याचेच्छम्भुमन्दिरमहोऽर्चनसंरतेभ्यः
तस्मादिहत्यपुरुषा उत बालिकाश्च
श्रीत्र्यम्बके धृतधियश्शिवतां समीयुः ।।६७।।

यद्वाऽपि नीलकमलैरथ रक्तकाब्जैस्-
स्याद्यश्च हंसमिथुनेन सुशोभितो वा
मीनैश्च कच्छपगणैर्भृतशुद्धनीरैश्-
शम्भ्वालयस्य निकटे यदि चेत्तडागः ।।६८।।

तस्मिंश्च सान्ध्यपरिपूजनहेतुरत्र
विप्राः प्रभातसमयेऽपि शिवार्चनाय
चेद्वा लसन्ति बुध! चन्द्रविभातरात्रौ
श्रीचन्द्रशेखर! मुदा प्रकरोतु तद्वै ।।६९।।

स्याद्वैश्विकं त्विदमिह प्रतिवक्ति यो वा

नैवोद्भविष्यति च धर्मकृताऽत्र चर्चा
संस्थानमेतदपि धार्मिकभेदशून्यं
शम्भ्वालयः कथमिवाऽत्र विनिर्मितं स्यात् ।।७०।।

तेभ्यो हि नास्तिकजनेभ्य उतास्मि वक्ता
साहित्यशब्दपरकेष्वथ शास्त्रजाले-
ष्वेवं भवन्ति बहुदेवशुभार्चनाऽपि,
तद्वा कथम्पठति देवसुभक्तिहीनः ।।७१।।

'चिन्ता हि माऽस्तु' वदति स्म पुरा बुधो यश्-
चेद्वाऽपि दुष्करमहो बहुकार्यजालम्
यश्चाधुना कुलपतिस्त्विति शोभतेऽहो
तस्मै निवेदयतु शङ्करमन्दिरार्थम् ।।७२।।

श्रीपाणिनिर्ह्यपि शिवस्य कृपावशाच्च
लब्ध्वा चतुर्दशमहो शिवसूत्रजालम्
तेनैव सर्वजगति प्रथितं हि शाब्दं,
तस्माच्छिवस्य निलयं प्रकरोतु चात्र ।।७३।।
यो वै सदा हितकरं प्रवदेद्द्विजेभ्यः
कल्याणमार्गपरिदर्शकमेव वाचम्
प्रेम्णाऽपि भर्त्सनपरेण यथाऽपि भूयात्
तत्तन्नियम्य मनसा वचसा प्रकुर्यात् ।।७४।।

येऽस्मान्न तुच्छमतयो परिलोक्यमानाः
वित्ते पदे स्वविभवेऽभिमतिं दधानाः
दृष्ट्वा न च स्मितमुखाः, न समादरन्ति
क्रोशाद्वयं शिवरताः भुवि ताँस्त्यजामः ।।७५।।

ये प्रेममात्रमपि चादरमेव चित्ते
ह्यस्मत्कृते स्वहृदयेन सुदर्शयन्ति
ये चित्तभावमुखहृज्जविकारविज्ञास्-
तान् सज्जनान् वयमहस्सु सदा स्मरामः ।।७६।।

विज्ञाश्च ये पदमदान्न विलोकयन्ति
ह्यस्मादृशान् हररतान् स्वमुदि प्रमग्नान्
विद्याभिमानवशतोऽपि च हेयभावं
सन्दर्शयन्ति कुधियो, न वयं नमामः ।।७७।।

काव्यप्रदर्शनमहो न करोमि गर्वात्
विद्याप्रदर्शनमपि प्रतनोमि नैवम्
बुद्धौ परिस्फुरितभावनिदर्शनाय
तुभ्यं निवेदयति पत्रमिदं द्विजोऽसौ ।।७८।।

प्रेषको हिमांशुगौंडो, लेखनकालस्स्थानञ्च – आश्विन-नवरात्रकाले,२०१७, (०२-१०-२०१७) रा.सं.सं. भोपालपरिसरस्थे कविभास्करच्छात्रावासे, १०४ सङ्ख्यके कक्षे ।

।।। ९. श्रीखेमचन्दाय पत्रम् ।।।

****

भो खेमचन्द! शृणु यच्च वदामि तुभ्यं
कल्याणकारिहरिभक्तिपथं वितर्तुम् ।
शोकप्रदं जगदिदं भयदैश्च जीवैः
व्याप्तं जराजनिमृतिश्रित एष देहः ।।१।।

वार्धक्यकाले हरिभक्तिपूर्णो भवाधुना भो त्यज गेहमोहम् ।
स्वस्थो यदासीत्तव मन्दिरेऽपि श्रद्धां च निष्ठां परिदृष्टवाँश्च ।।२।।

अस्मद्बहादुरगढे प्रचरन्ति नैके
धर्मप्रतीतिकरदुष्टजनाश्च केचित् ।
आर्ये समाज इति येऽत्र बहून् जनांश्च
तर्कप्रतिष्ठमतयोऽपि विनिक्षपन्ति ।।३।।

दृष्टा मया बहुसमेषु भवत्सुचर्या
धर्मप्रमोदगतिकं च शिवालयेऽपि ।
श्रीमद्भवन्तमथ दुग्धतिलादिमिश्रैस्-
तोयैर्मुदा शिवमिमं ह्यभिषिञ्चयन्तम् ।।४।।

धन्या प्रथा नरवरे प्रथिता सदैव
तां वै बहादुरगढे प्रथयेत्क एवम् ।
सत्यं सनातनमहोऽखिलधर्मसारं

ज्ञात्त्वाऽथ धीरपुरुषो लभते सुखानि ।।५।।

गायत्रीपरिवारस्स्यादथवा कोऽपि चापरः ।
सनातनस्य धर्मस्य मताँश्च खण्डयन्ति ये ।।६।।

न मान्या नैव गण्यास्ते न श्रोतव्या कथञ्चन ।
केवलं भक्तिमार्गैश्च ज्ञानमार्गैर्व्रजेत्सुखम् ।।७।।

धर्मसारो हि यन्नोऽस्ति यच्चास्त्यत्र सतां क्रमः ।
सारतस्तद्ब्रवीम्यद्य वणिग्वृद्ध! शिवाश्रयम् ।।८।।

हरिभक्तौ मनो यस्य संसारे नैव मज्जति ।
इन्द्रियार्थप्रसक्तो वै मज्जन्सन्नपि लज्जते ।।९।।

भ्रमन्तस्संसारेऽहह कपटचित्ताः कुमतयः
सदा धर्मव्याजे सरलपुरुषान् वञ्चकजनाः
विलुण्ठन्तः कूपे पतनगतयोऽशास्त्रमतयः
धनार्थांस्ताँश्चौरान् निपुणजन! जानीहि सुधिया ।।१०।।

वृद्धत्त्वे हरिनामैकं सर्वसारं विबुध्य च ।
त्यक्त्वा मोहं कुटुम्बस्य भजेच्चेत् सौख्यमाप्नुयात् ।।११।।

लेखनकालो दिनाङ्कश्च – १२: ०० मध्याह्ने,जुलाई २०१८,दिल्ल्याम्।

||| १०. श्रीमत्कैलासचन्द्रदाशेभ्यः पत्रम् |||

****

कैलासचन्द्रगुरवे विनिवेदयामि
दाशाय शाब्दिकजनप्रियशाब्दिकाय
भो शोद्धृलोकपरिदर्शितधीवपुष्क!
स्वारः ममाप्ययति शोध इहैव पूर्तिम् ।।१।।

भोस्सज्जनार्चितपथभ्रमणातिमोदिन्
भोश्चोत्कलप्रियनिवाससुजन्मकर्मन्
भोपालदेशघनवर्षितवारिहर्षिन्
भोजप्रदेशकवितावनिताप्रमोदिन् ।।२।।

यद्यप्यहं बहुसुकालमहोऽप्यतीत्य
कर्तुं न शक्त इह चाऽप्यभवं स्वशोधम् ।
यद्वत्सरैर्विगतशिष्टचतुष्टयैर्वा
त्वत्प्रत्ययो मयि तथापि न चास्तमेति ।।३।।

त्वत्प्रेमभैषजगिरां परिसेवनेन
शाब्दीपुराणविभुतापरिदर्शनेन
काव्यादिचिन्तनरतोऽत्र समस्तकालं
चायादिपानगतिभिर्मुदताङ्गतोऽस्मि ।।४।।
शैवैर्जनैरपि च यस्य दिनं दिनं वा
नूनं महत्वमगदीति धिया श्रमस्य

के न प्रयान्ति गहने पतनाननेऽहो
त्यक्तौन्नतिप्रतिदिशप्रविनष्टमार्गाः ।।५।।

पुष्पाकृता द्विज! विभाति च कौमुदी या
तस्यास्त्रयोदशविभागगतस्वराणाम् ।
भट्टोजिदीक्षितकृतेन सहाऽत्र सर्वं
सन्तोल्य भैन्न्यमसकृद् परिदर्शयामि ।।६।।

धातुस्वरैरपि समासगतस्वरैर्वा
फिट्सूत्रशब्दविधिनिर्भृतसुस्वरैर्वा ।
स्वारैस्तिङाम्प्रतिपदाम्प्रतितोलनेन
ग्रन्थद्वयान्तर्गतं परियामि तथ्यम् ।।७।।

चितश्चान्तोदात्तो भवति तु तितस्ते स्वरितता
सदैवान्तोदात्तो गदितमथ धातोः प्रथमतः
समासस्याप्यन्तो व्रजति च मुदोदात्तपदवीम्
उदात्तादिर्वै प्रत्ययगतविधिः पाणिनिमुखात् ।।८।।
(फिषामन्तोदात्तो मकरमलयाद्याद्युदितता)

अहो फिट्सूत्रेषु क्रमश इव चैते निगदिताः
मुहुः बाध्यं वा बाधकमपि च शास्त्रं विधिवशात्
बुधस्सूत्रैरेतन्मनसि घटयित्वा स्वरनये
सरेद्द्रोनर्दीयेऽप्यथ सकलशास्त्रे नियमितः।।९।।

फिषां च स्वराः शान्तनुप्राज्ञसूक्ताः
कदाचित्करूपैस्स्वरानर्थयन्ति ।
सदा भाष्यपङ्क्तीः समुद्धृत्य सर्वे
स्वरज्ञाः भवन्तीति कुर्वे विचारम् ।।१०।।

कुतश्शोधकल्पा कुतस्स्वारसारः
कुतो ग्रन्थतथ्यार्चनं वा विदध्याम् ।
अहो वै जगज्जालबद्धाः मनुष्याः!
धनार्थाः स्वरार्थाः कथं वा स्वरेम ।।११।।

कथङ्गतानि नस्समानि विद्महे न भोः बुध
ह मध्यसुप्रदेशके विनापि शोधपूरणात् ।
क्रमस्समैर्दुरन्तगो विलेढि जीवनं द्रुतं
हरेस्स मायया जगत्प्रपञ्चतावभासते ।।१२।।

चिन्तां विधेहि न भविष्यति मेऽपि शोधो
द्वित्रेषु माससमयेषु च मन्निबोधः
प्रायो भवेत्पथि च पिच्छलता जलेन
मार्गान्तरेण समयेन सुयान्ति विप्राः ।।१३।।

यद्धार्दिकं मयि भवान् विनिवेशयन्वा
प्रेमार्द्रहार्दगतिको न भवेत्क एव
बाधाः प्रतोड्य स्वधियाऽथ शिवप्रसादैर्-

नूनं द्रुतं सुभविता मम शोधकार्यम् ।।१४।।

कार्याणि नूनमफलानि भवन्ति तस्य
यो वै गुरोश्च वचनानि न पालयेच्चेत्
सम्पद्धनं यश उतार्थकरप्रसादं
सर्वे हि तस्य कृपया सुजनाः लभन्ते ।।१५।।

वार्तां तथापि निवदामि पृथक्च यास्ति
चेद्वा भवान् स्वसखिमण्डलसंवृतोऽस्ति
नाहं समान् विगणयामि च ते समानान्
यं वेद्मि मान्यमपि तच्चरणौ नमामि ।।१६।।

रुद्धः प्रमादवशतो मम शोधबन्धो,
नैवोचितं, भवति दुःखगतिर्हि जीव्ये
त्वत्सन्निधौ सुशोद्धृजनाः य एवं
रुद्धोन्नतिस्तु विफलैर्भवतां निजस्य ।।१७।।

बाधाकुलोऽपि कथमेव भवेन्निराशो
दुःखावृत्तोऽपि कथमेव भवेद्धताशः
सत्प्रेरणाभृतजनो भवति प्रकाशः
पार्श्वे हि यस्य सुजनो भवतीह दाशः ।।१८।।

तस्माद्धताशमनसा न हि हापयामि

शोधं च चिन्तनरतो सुसमाप्य विद्वन्
त्वद्धस्तपङ्कजतलेऽत्र समर्प्य भामि
शीघ्रं गुरो भवतु तेन द्रुतं सुखास्यः ।।१९।।

एल्.टी-परीक्षणमिहास्ति जुलायिमासे
तस्मिन्नियुक्तपुरुषो लभते सुखानि
तस्माद्यतेऽहमिह भोः परितर्तुकामः
को नैति धन्यपदवीं नृपवाप्तवृत्तिः ।।२०।।

प्रेषको - हिमाँशुगौडः
लेखनसमयो दिनाङ्कश्च -११.४७ पूर्वाह्ने, २९-०६-२०१८ ,दिल्ल्याम् ।

||| ११. प्रो.प्रकाशपाण्डेयेभ्यः पत्रम् |||

(रा.सं.सं.भोपालपरिसरप्राचार्येभ्यः)

****

किन्तानि नीरददिनानि तथैव चाद्य
हृद्यानि यौवनविलाससमुत्सुकानि
भोपालदेशखगतानि वयांसि वापि
दृश्यन्त आगतजनैरिह नीरजानि ।।१।।

प्राचार्य भोः मम मनो न तथेह देहो
विश्राममोदकविताकरणप्रभातम्
दिल्ल्यां प्रदूषणमहो जलवायुखेषु
स्वास्थ्यं हि तेन मम दुःखगतौ गतं वै ।।२।।

मन्ये त्विहापि रतिदक्षनवाङ्गनानां
सर्वत्र दर्शनमहो सुलभं च मह्यम्
किन्त्वद्य यौवनगतो न पतामि कामे
शास्त्रीयमार्गपरकोऽस्मि विवाहकाङ्क्षी ।।३।।

पूर्वं त्वहं कवनमोदयुतश्च चायं
पीत्वा मुहुर्बहुदिनैरवसं सुहृद्भिः
भोपालके परिसरे परिलग्नशोधो
बोधोऽत्र मय्यपि तथाऽप्यविशन्नवौजः ।।४।।

सर्वेऽपि चेह विबुधा हितदर्शकाश्च
छात्रस्य दुःखपतितस्य सुखप्रदाश्च
अस्माकमेव सुहृदां नवशास्त्ररञ्जा
दृश्या द्विजैरहरहो निवसद्भिरेवम् ।।५।।

श्रीमत्प्रभावलसितो बुध येन भानि
वेद्यप्रमोदमपि येन सदा प्रयामि
मुञ्चामि नैव कविताञ्चितचित्तमञ्चं
मार्गे निमार्जनरतो प्रयते विहर्तुम् ।।६।।

रोचेत मे शिवगृहस्थितवृक्षमूले
स्थित्वा प्रशान्तमनसा क्वचिदर्च्यमार्गः
सङ्गीतलब्धबहुरङ्गभरोत्तरङ्गश्-
चैकान्तिको दिनगणान् परियातुमीहे ।।७।।

स्यान्नैव चेत्परिचयो हि भवादृशानाम्-
एकान्तमौनगतिकाय च मादृशाय
विज्ञोऽस्ति संस्कृतजनोऽस्ति विचार्य विद्वन्
गीर्वाङ्गिनबद्धहृदयेन लिखामि पत्रम् ।।८।।

सर्वे धरातल इह प्रभवन्ति भूयो
नानविचारकरणप्रविलब्धमार्गाः
कः किञ्च केन कथमेव करोति कार्यं

श्रद्धा हि तत्र भजते प्रमुखं विलक्ष्यम् ।।९।।

श्रीमन्द्विजाऽत्र पुनरेव शुभागमस्य
शास्त्रीयचर्चनपरस्य सतां सकाशे
चायप्रपानकरणस्य च लड्डुकानां
लब्धाशनावसर एमि हि सौख्यबुद्धिम् ।।१०।।

भोश्श्रीसुरार्चनगिरां प्रियमाणवानां
सच्चर्चनैकविषयप्रतिवर्तितानाम्[12]
मोद्यस्वरूपलसितश्रितवारिभाव
शोधो ममाप्ययति शीघ्रमथैव पूर्तिम् ।।११।।

वर्षत्रयैरहमिह प्रतिभासनेरो
नानाक्रियागतसुवाप्यशिवैकभावः
चायं निपीय निशि जागरणादथैवं
वृक्षप्रियप्रकृतिकाव्यकृतीरकुर्वम् ।।१२।।

कैलासदाशगुरुरत्र च मार्गदर्शी
शोधप्रचोदनपरो हि हितप्रवक्ता
तं वै सुजीवितसदर्थसुखक्रमं[13] च

---

[12] सच्च तच्चर्चनं , तदेवैकविषयः, तं प्रति वर्तन्ते ये (माणवाः) तेषाम् इति विग्रहः ।

[13] सतां ये अर्थाः सदर्थाः, तेषां यः सुखक्रमः,सुजीवितः सदर्थसुखक्रमः येन सः, तस्मै ।

नत्वा स्वशोधमपि सद्य इहार्पयामि ।।१३ ।।

वेद्मीह नैव मतिमन्! भवतस्स्वभावं
किञ्चिद्दिशामि तदपि स्वगिरा विमर्शे
यस्संस्कृतैस्सरति तस्य किमानुपूर्वी
चेया च शब्दपुरुषैः वचसां प्रवाहे ??१४।।

ये देवजीवनमहो परिजीवमाना
सद्वाक्प्रकाशनसुयत्नमथादधानाः
षट्कर्मसूक्ष्ममतयो यदि सावधानास्-
तेभ्यो लिखाम्यहमहस्सु सुरम्यभावान् ।।१५।।

प्रेषको – हिमाँशुगौडः
लेखनसमयो दिनाङ्कश्च – २.१५ अपराह्णे, ९-९-२०१८
स्थानम् – गाजियाबादस्थे गृहे ।

||| १२. श्रीमज्ज्ञानेन्द्रपाठकेभ्यः पत्रम् |||

****

ज्ञानेन्द्रपाठकगुरो! शृणु चास्मदीयां
चित्तोदितां बहुसमैः विगतैश्च वार्ताम्
वस्वन्तरिक्षयुगलाश्वितमे तथाङ्ग्ले
वर्षे यदाऽहमयितोऽमरदीपकेन ।।१।।

साकं मृतस्य निलये जपितुं च शान्त्यै
यद्वा त्रयोदशदिनेष्ववसं च मूढः
बाबूगढे मृतगृहे ह्यपि सूतके च
स्त्रीणां च रोदनमये विलपत्सु पुंसु ।।२।।

अत्यन्तभीरुरिव मे जगदज्ञकस्य
सन्ध्याद्वये सुरसुरक्तिकरद्विजस्य
तत्राभवद्दशदिनैरदनं जपश्च
शास्त्रैर्निषिद्धमपि यत् बहुधाऽप्यशौचे ।।३।।

नाहं सुखं न च समर्थकरत्वमेव
लब्धप्रसाद उत नाप्यभवं कदाचित्
याताश्च शीतदिवसा कठिनावगाहाः
स्त्र्याद्यश्रुरोदनविशोकभरावलोकाः।।४।।

कृत्वा त्रयोदशसुकर्म निगृह्य चाल्पां

यद्दक्षिणाममरदीपहिमांशुविप्रौ
आयात्य वा नरवरे श्रुतवान् त्वदास्यात्
शुद्ध्यर्थमर्थकरणं श्रुतिगं विधानम् ।।५।।

यज्ञोपवीतपरिवर्तनपूर्वकञ्च
गायत्र्यममुं जप जन त्रिदिनेष्वभोजी
गङ्गाजलैरपि च गोमयलेपनैश्च
स्नाहि प्रभातसमये दिवसान्तकाले ।।६।।

बाबागुरुस्त्वपि विधिप्रतिबोधनेन
रुद्रस्य सूक्तमथ रे जप चेत्यवोचीत्
श्रीजाह्नवी निखिलपातकनाशिनी वै
तत्सेवनैर्न शुचितां प्रतियाति को वा ।।७।।

विप्रैः क्वचिद्भवति चेच्छ्रुतिशास्त्रहानिः
आचारगत्रुटिरथोद्भवति ह्यशौचः
भोज्यं कुभोज्यमिति वा प्रभवेद्विचारः
सर्वत्र तन्नरवरेऽत्र निवार्यते वै ।।८।।

आचारगुण्यपदवीमत एव याति
शास्त्रप्रकर्षपदकैरपि यच्च भाति
देवार्चनारतजनैरपि पुण्यमेति
सेव्यं च ते नरवरं सकलैः प्रवेद्यम् ।।९।।

किं कश्चिदद्य पठतीह भवन्मुखाच्च
नागेशभट्टकृतशब्दगपङ्क्तिभाष्यम्
बाबागुरोरुत शुभाश्रममण्डपे वा-
ऽध्येति श्रमैस्सुबटुकोऽस्ति तपस्विरूपः ।।१०।।

मन्येऽधिकैरिह निवासकरैश्च विप्रैर्-
न ज्ञायते सुपठनस्य सुखं महत्त्वम्
ते दक्षिणाक्षणिकसौख्यसमीक्षणाक्षाः
नो वै विदन्ति गुरुभिः परिचोदिताश्च ।।११।।

बाल्ये गते च युवतायुतचित्तदेहे
विद्यां न वा गुरुजनान् गणयन्ति ते वा
पश्चाद्दरिद्रगतयो परिलभ्य तापं
विद्यार्थिजीवनमहो परिसंस्मरन्ति ।।१२।।

तस्माद्गुरो! य इह च श्रमकृच्च शास्त्रे
सन्त्यज्य वित्तविभुतां परिसंस्थितश्च
छात्रं हिते परिणियोज्य च शास्त्रकर्मन्
जीव्यं समं सुखकरं प्रकरोतु तस्य ।।१३।।

शोचेच्च रोदिति दिशो परिधावतीति
कुर्याम किं त्विति सदा परिचिन्तयेच्च
त्यक्त्वा स्वकर्म, यजनं पठनस्य काले

यः कारयेत् स पुरुषो लभते न शान्तिम् ।।१४।।

मादृग्जनोऽपि मतिमन् अलसप्रभावात्-
सन्ध्यादिकर्मविरहाज्जगतीह धावन्
वृत्तिं न वाऽऽप्य चरति,स्मरतीति वाक्या-
न्यस्माकमत्र गुरुभिः कथितानि यानि ।।१५।।

बद्धुं शिखां पुनरपि श्रुतिकर्म कर्तुं
शास्त्रं परीक्षणनदीः मुहुरेव तर्तुम्
आयामि वै नरवरेऽल्पतपोऽवशिष्टं
यत्तत्प्रकर्तुमहमत्र हिमांशुगौडः।।१६।।

चित्तेऽस्माकं द्रुतं चैषा घटना जागृता यतः ।
भवतां चापि संज्ञानेऽतोऽहमत्र न्यवेदयम् ।।१७।।

दिल्लीप्रदेशवसनादपि कार्यजाल-
बद्धात्मजीव्यगतिकादपि नान्यचिन्त्यात्
रात्रौ कदाचिदिह चायसुपेयपानाज्-
जागर्त्ति मे नरवरव्यतियातकालः ।।१८।।

उच्चस्थितोऽस्ति कुण्डल्यां ज्ञानेन्द्रो मे बृहस्पतिः ।
तस्मात्तस्य प्रभावत्वात् ज्ञानरूपं नमाम्यहम् ।।१९।।
बुधानां मतवैभिन्न्यं यद्यपीह भवन्ति वै ।

नरवरस्य महत्ता भो तेन न क्षीयते गुरो ।।२०।।
अग्रिमे चापि कालेऽहं पत्रहारित्यमाचरन् ।
मनत्सु चापि हारित्यं करिष्यामि विचारकृत् ।।२१।।

पिनहाटस्य यो विद्वन्! आयाति स्म पुरा धनी ।
अधुना किं स पूजार्थं घृतं दातुं समुत्सुकः ।।२२।।
अभिषेकं शिवस्यापि शिवरात्रौ द्विजैश्च यः ।
कारयन् शोभितः पुण्यैः मधुदुग्धघृताम्बुभिः।।२३।।

सर्वदा गौडविप्रोऽहं बाबाकुटीनिवासकृत् ।
बाबास्नेहरसैस्सिक्तः स्मराम्यद्यापि तत्समम् ।।२४।।
न द्वेषं न च मात्सर्यं केनचित् शास्त्रवाग्गुरुः।
कुरुते सत्यमार्गश्श्रीबाबावन्नैव कोऽप्यहो ।।२५।।

....

प्रेषको हिमांशुर्गौडो
दिनाङ्कः समयश्च – ०६-०३-२०१८ , ९.४० रात्रौ, गाजियाबादस्थगृहे ।

||| १३. आचार्यदीपकहरिदत्तशर्मणे पत्रम् |||

****

भो भो दीपक! कुत्र ते स्थितिरथोद्योगश्च को वर्तते
यातानीति दिनानि दीर्घतमया नो वार्तया मोदितः
त्वत्साकं न समैश्च हास्यपरकैःयात्रादिवृत्तान्तकृत्
त्वं चैवं हरिदत्तदीपक इति ख्यातोऽधुना ज्ञायते ।।१।।

आश्रित्य त्वां शतकमपि च प्रारचीत्यत्र मोदैः
तस्यारम्भः कृतमपि मया शङ्कराक्ष्यब्दपूर्वम्
कल्पा भूयः निजकविधिया यन्नरौरास्थलस्य
चर्या दृष्टा नरवरनगर्यां पुरा नैकवर्षैः ।।२।।

त्वद्भावीति प्रथितमनसा कल्पना या कृताऽपि
तत्त्वच्चित्रं जगति पुरुष ख्यापनायाऽधुनाऽहो
काले काले स्फुरितनवभावैस्स्वभावासरोऽहं
त्वद्गुण्यैर्मोदितबहुनृणां दृश्यमाकल्पयामि।।३।।

यदि मुदितमनास्त्वं वर्तसे नैजगेहे
विविधपठनकार्येष्वत्र लग्नोऽसि वाऽद्य ।
धनकरणसुवृत्तिं प्राप्तुमाचेष्टयन् वा
मम सकलशुभाशौन्नत्यमार्गे त्वदीये ।।४।।

शतकमिदमहं यत् त्वत्कृते चार्पयामि
नवकवनवितानप्रार्थनायेत्यवेहि ।
तव बत यदनुक्तं केनचित्किञ्चिदूह्यम्
तदिह निजमनीषाभिस्समाख्यापयामि ।।५।।

द्विजेह संश्रणुष्व रे मदीयभावकाशिनीं
स्थितिं ममात्र वा विभिन्नकार्यबद्धसारणीम् ।
कुवृत्तिपाशबद्धमानुषः कदापि सौख्यदां
गतिं न वाऽऽप्नुतेऽनुभावयामि चात्र सर्वतः।।६।।

अहं गाजियाबादपुर्यां वसामि प्रभातेऽप्यतश्चैव दिल्लीं प्रयामि ।
न सूर्योदयं नैव सूर्यास्तकालं स्वकार्यालये कार्यकृद् द्रष्टुमर्हः।।७।।

न चास्मादृशां जीवनं चैवमस्ति
सदा शान्तिसौख्यं प्रधानं मतं यत् ।
अतस्सन्त्यजामीति चित्ते विचार्य
मुधाऽत्राप्यहानि द्विजाऽऽयापयामि ।।८।।

प्रदुष्टोऽत्र वायुः नृणां वा मनांसि न कस्यापि कोऽपीह वर्तेत मित्रम्
कुदिल्लीप्रदेशो न मे रोचते वै यदा धावतां वीक्ष्य लब्धुं च वित्तम्
।।९।।
यदि त्वं नरौरापुरं नैव यासि न बाबागुरोः दर्शनं वा करोसि ।

तदा चित्तशान्तिं कथं प्राप्नुयाः रे द्विजाऽतो प्रयाहि द्रुतं तत्र भक्त्या
॥१०॥

होलिकोत्सव एवाऽयं चागतो वार्षिकोऽप्यहो ।
नानारङ्गैः निजं चित्तं दीपकारञ्जयेः पुनः ॥११॥

होलिकाग्नौ च ते क्लेशाः मम नानाविधास्तथा ।
नृसिंहपूजया नष्टाः भवेयुश्चेति कामये ॥१२॥

अस्मिन् महाजनौघेऽहो क्व मिलन्ति मिथो जनाः।
सन्तो वाऽपि द्विजाश्चापि पुण्यैरेव हि तद्भवेत् ॥१३॥

प्रेषकः – हिमांशुगौडः
दिनाङ्कः समयश्च – २८-०२-२०१८ , ९.३० रात्रौ,
गाजियाबादस्थे स्वगृहे, चायपानानन्तरं लिखितम् ॥

||| १४. आचार्यजैनेन्द्रभारद्वाजाय पत्रम् |||

****

आदौ नमामि गणनाथमशेषनाथं
काव्यप्रदं श्रुतिगतं च पुराणतत्त्वम्
यन्मङ्गलं नरवरे च विलोकितो वै
जैनेन्द्रनामकजनाय निवेदयामि ।।१।।

श्रेष्ठोऽपि सज्जनमनांस्यवगच्छतीति
ज्येष्ठोऽपि मादृशजनाँश्च सुमन्यते वै ।
ज्ञानेन्द्रशब्दपुरुषादवगम्य शास्त्रं
जैनेन्द्रविप्रपुरुषः परिशोभतेऽहो ।।२।।

बाबागुरोश्च बहुधाऽथ निशम्य नाना-
शास्त्राणि नव्यपुरुषार्थकराणि यश्च ।
विप्राभिमानपरिवर्धकवाग्धरो यश्-
शैल्या स्वसत्यमनसा सकलैः प्रशंस्यः।।३।।

श्रीमन्! भवानिह सदा बुधपुण्यभूमौ
कर्मण्यतां प्रथितवान् वचसाऽपि कार्यैः।
तद्वच्च वर्तनमहो बहवश्च विप्रा
अद्य क्वचिद्धि दिवसेषु निदर्शयन्ति ।।४।।

श्रीप्राबले शुभमखेऽथ सहस्रसङ्ख्यैर्-

विप्रैस्समाकुलसुमण्डपमण्डितेऽपि
कश्चित्प्रवेशसमयेऽल्पमतिर्द्विजो यः
प्रष्टुं हि सान्ध्यकसुमन्त्रमथ त्वदास्यात् ।।५।।

कज्जल्पनां कुपुरुषाच्च कुगर्वयुक्ताच्-
छ्रुत्वा स वै नरवरस्य च शास्त्रसिंहः
सद्योऽब्रवीत् स्वगुरुमत्र निमन्त्रयाऽरे!
प्रष्टुं च शाब्दमखिलं शृणु मन्मुखाच्च ।।६।।

तद्दर्पयुक्तवचसां प्रतिवाहिताग्निं
स्वीयं गुरुं स कुमना अवदीत्समस्तम्
कश्चिद् गुरो! नरवरस्य बटुर्विदग्धश्-
श्रीसाङ्गवेदभवनादिह चागतोऽस्ति ।।७।।

जैनेन्द्रनामकजनोऽस्ति स शास्त्रमानी
कृत्वा स तिष्ठति परीक्षकमानहानिम् ।
तत्र स्थिताश्च सकलाश्चकिता अभूवन्
रुष्टोऽभवत् प्रबलराट् प्रतिवक्ति विज्ञान् ।।८।।

पश्यन्त्वरे मम मखे स च कोऽस्ति गर्वी
शास्त्रार्थहेतुरधिकोऽस्ति समुत्सुको यः।
सर्वे बुधाः प्रबल एव तदा गताश्च
यत्राऽऽस्थितास्सकलयाजकविप्रवृन्दाः ।।९।।

जैनेन्द्र! हे! वद यदि त्वमथास्ति शास्त्री
कीदृक्कथं भवति वा द्विज! सुध्युपास्यः ।
रूपाणि कानि कति चापि भवन्ति तस्य
गर्वोऽस्ति चेन्नरवरस्य सुबालकश्चेत् ।।१०।।

चत्वारि तस्य च भवन्ति समानि रूपा-
ण्यर्थैश्च सिद्धिपरकोऽपि च ते वदामि ।
पूज्योऽसि मे शृणु तथापि सुधैर्ययुक्त!
प्रोक्तं समं च विधिवद् यतयेऽथ तस्मै ।।११।।

जाने कथं न यतिरस्य निशम्य शास्त्रं,
वेत्सि त्वमत्र विषये नहि बालकाऽरे ।
उक्त्वा निरस्तमकरोत्प्रबलोऽस्य वाचं,
तत्रस्थयाज्ञिकजनैश्च समर्थितस्सन् ।।१२।।

मोदस्तथापि हृदये नहि तस्य जातः
काकूक्तिवाचकबुधैः परिचर्यमाणः।
उच्चैरघुष्यदयमत्र तदैव वाचं
तेजोयुतां हरिरिव प्रतिगर्जनाभिः ।।१३।।

सर्वे भवन्त इह सन्ति मृषा वदन्ति
बालं च मामभिभवन्त्यपि सत्यवाचम् ।
जैनेन्द्र इत्यभिहितोऽस्मि सहे न किञ्चिच्-

चाल्पज्ञदुष्टपुरुषस्य कदापि गर्वम् ।।१४।।

सर्वेऽपि ते नरवरं परिवीक्ष्य शास्त्रैर्-
गर्जन्तमर्थकुशलं ह्यथ विस्मिताश्च ।
कोऽसौ कुतः किमिति ते मिथ ऊह्यमानाश्-
चित्ते तथादरयुता विबुधैर्निदृष्टाः ।।१५।।

आहूय तञ्च रहसीत्यपरे बुधाश्च
प्रेम्णाऽपि बालकमिमं प्रवदन्ति केचित् ।
जैनेन्द्र! सत्यवदनस्सदनं श्रुतीनां,
सम्यक्त्वया निगदितस्त्विह सुध्युपास्यः ।।१६।।

जानीमहे वयमपीह समस्तशास्त्रं
सद्धर्मितां नरवरस्य तपांसि नूनम् ।
किन्त्वत्र माणव! शृणु प्रबलोऽस्ति पूज्यो
मान्यस्सदैव पुरुषैरपि वै तपस्वी ।।१७।।

क्रोधं जहातु द्विज रे! त्वमपीह वन्द्यः,
सर्वे द्विजाः नरवरस्य समैः प्रणम्याः ।
न प्रेमतां प्रबलराट् त्यजति क्वचिच्च
बाबागुरुर्नरवरः प्रिय एव तस्य ।।१८।।

वाग्वह्निसंविलसितोऽत्र समैः प्रशंस्यो

हर्षाशयो हरहरेति सदोच्चवक्ता ।
जैनेन्द्रनामपुरुषः परिशोभते वै
श्रीसौख्यभृन्नरवरे वृणुतेऽथ धर्मम् ।।१९।।

एतादृशं तव पुरा हि च यच्चरित्रञ्-
चाक्ष्णोः पुरः मम सदैव च वर्ततेऽहो ।
त्वं सर्वदा सुबटुकैरपि चेह मान्यो
दुश्चित्तचेष्टनजनस्य सदा विरोधी ।।२०।।

संस्मारयामि भवते भवतो हि शास्त्र-
प्राकर्ष्यकर्षिवपुषं द्विजहर्षदं तम् ।
भ्राताऽस्ति मे गुरुपरम्परयाऽनुसारी
विद्याधनं भवति वै न च भारकारि ।।२१।।

तां वीरतां परिनिधाय हृदि स्वकीये
स्मृत्वा पुनस्स्ववपुषं हरिगर्जनां वा ।
वर्चस्वतां नरवरस्य पुनर्विधेहि
येनैव सर्वशुभता परिकृष्यतेऽहो ।।२२।।

जैनेन्द्राय नमस्तुभ्यं भारद्वाजाय वै पुनः ।
स्वाभिमानसमासक्तं विप्रमानप्रवर्धकम् ।।२३।।
पत्रं चैतल्लिखाम्यद्य न जाने केन चोदितः ।
शिवरात्रिनिशायां च त्वां निवेद्यास्मि मोदितः।।२४।।

गौडश्चायं हिमांशुर्यो नानालोकेषु सम्भ्रमन् ।
कल्प्येषु स्वप्नदृश्येषु वायुर्भूत्त्वा प्रवर्तते ।।२५।।
शोधबोधैस्तथा मोदैश्चोदैश्चापि पुनः पुनः ।
नरवरे वायुषूद्भ्रान्तो तुभ्यं पत्रं लिखेदहो ।।२६।।

अस्मच्चित्तेषु कोऽयं नश्शिवो भूत्त्वा प्रवेगवान् ।
बिल्वपत्ररसोद्गन्धीभूय भूयोऽनुधावति ।।२७।।
विप्र! वार्तामिमाम्मेऽत्र शृणोत्वच्युतभक्तिधृत् ।
जैनेन्द्रं त्वां हिमांशुर्वै स्मरेदत्र स्मिताननः।।२८।।

प्रेषको – हिमांशुर्गौडो
दिनाङ्कः समयश्च -१३-०२-२०१८ , १०.०२ रात्रौ ।
गाजियाबादस्थे गृहे ।

।।। १५. श्रीमत्र्यम्बकेश्वरचैतन्यस्वामिभ्यः पत्रम् ।।।

****

भो भो त्र्यम्बक! मोदमानमनसा किञ्चित्क्षणं श्रूयताम्
यज्ञार्थं बहवो भवन्ति बटुकाः ये दक्षिणावाञ्छुकाः ।
केचित्सान्ध्यजशास्त्रकर्मरहिताः वृन्दावनाद्ब्राह्मणाः
यं यं पश्यसि दीनहीनगतिकं तं तं हि यज्ञे कुरु ।।१।।

सूच्यां नामविलेखनाय बहवः पार्श्वे स्वकार्याय ते
आयान्तीत्यथ भो गुरो! कुरु कृपां शिष्योऽस्मि तेऽहं सदा ।
जानीते तव नाम को न जगतीहाऽप्येव भो शास्त्रराट्
इत्याख्यैः बहुभिश्च चाटुपरकैर्वाक्यैस्तवाऽऽनन्ददाः ।।२।।

यो वा श्रीप्रबलैः प्रकारितमखे निक्षेपणे तत्परः
शाकल्यं, श्रुतवान्न वाचकजनस्योदीरितां मन्त्रणाम्
स्वाहाकारनिगुञ्जितो हि निखिलस्स्यात्तत्र वै मण्डपः
साहस्राश्शतशः प्रयान्ति पुरुषाः कौपीनधारिद्विजाः ।।३।।

नानासंस्कृतसुस्थलेभ्य इह वै चायान्ति कुम्भोत्सवे
तीर्थे श्रीप्रबलप्रदीप्तमखकृन्माङ्गल्यभृद्भूसुराः ।
कार्याकार्यविवेचने मम मतिर्नैवाधिकं धावति
मार्गैः कैरपि भोजनं शिवधृते चेद्दीयते पुण्यता ।।४।।

आयान्तीह बिहारघाटिपुरुषाः वा रामघाटिद्विजाः

श्रद्धारूपक-कार्णवासिकजनाः श्रीमद्भृगुक्षेत्रिणः
आत्मानन्दन-टाटियाश्रमिजनाः साध्वाश्रमे वासिनः
विद्वद्वृन्दसमाकुलान्नरवराच्छ्रीसाङ्गवेदाद्बुधाः ।।५।।

काश्याः वृन्दावनाद्वाऽपि हरिद्वारात्परे द्विजाः ।
प्रबलप्रखराणां वै यज्ञेष्वाहुतिदायकाः ।।६।।

एकदा तत्र यज्ञेऽभूत् परक्षेत्रिद्विजैः कृतः ।
उपद्रवो दुराशैस्तैः स्वीयवर्चस्ववाञ्छुकैः ।।७।।
घटनां तां वदाम्येवं यथाऽहं श्रुतवान् पुरा ।
नरवरस्य प्रतापो वा वर्धितो बलिना द्विज!!८।।

पात्राणां क्षालने सर्वे रक्तास्ते कृतभोजनाः ।
अन्यस्थलस्य दुष्टेन साङ्गवेदिकृशद्विजः।।९।।
पीडितो बलमत्तेन , कटारा रुष्टवांस्तदा ।
एकेनापि हि वीरेण शतशः ताडिताः मुहुः।।१०।।

कटारेति कटारेति नाम गुञ्जितवत्तदा ।
यज्ञक्षेत्रे च सर्वत्र भीतास्तेनाऽन्यदुर्जनाः।।११।।
ततः परं च सर्वे ते जानन्ति तस्य वीरताम् ।
नर्वरस्य च नामानि प्रथितानीति मन्यते ।।१२।।

केवलं नैव शास्त्रेण बलेनापि द्विजास्त्विमे ।

नरवरस्य क्षमा एवं प्राप्तुमिष्टं सुनिश्चितम् ।।१३।।
श्रीमंस्त्र्यम्बक! वार्तेयं चित्ते मेऽद्योदिता यतः।
भवतेऽतो निवेद्यापि रात्रौ निद्रां प्रयाम्यहम् ।।१४।।
कार्यजालसमाबद्धो यद्यप्यस्म्यत्र भो यते!
किन्तु हर्षार्थमेवात्र यज्ञस्मृतिकारणात् ।।१५।।

लिखाम्येतत् मुदाऽर्धेऽस्मिन् नैशे काले गृहे स्वके ।
दैवादहं कदापि श्री-प्राबले प्राखरे मखे ।।१६।।
बाबाकुटीनिवासित्वात्तेषां शासनशासितः ।
गतवान्नैव होतुं वा, शब्दशास्त्रे स्वरक्तितः।।१७।।

प्रणम्य श्रीहरिं, बाबा-गुरुं च त्र्यम्बकं मुदा ।
पत्रं निद्रातुरत्वाच्च समाप्याऽद्य विरम्यते ।।१८।।

लेखनसमयो दिनाङ्कश्च - ११.३० रात्रौ, ०८-०२-२०१८
स्थानम् – गाजियाबादस्थे गृहे ।

||| १६. डॉ.नवीनतिवारिणे पत्रम् |||

****

कं वै सुहृद्वदामो वा कस्मै दद्मश्च मानसम् ।
जगन्तीव प्रधावन्ति दृश्यन्तेऽस्माभिरेव वा ।।१।।

व्यथाकुलो जनो निवेदयेच्च कं स्वमानसं
स्वचिन्तनं तथापि मानचर्चनं शिवार्चनं
सुहृत्त्वितीह शब्दभाक्च धन्यभाग्विराजते
नवीनकल्पनायुतैर्विचार्यते पदे पदे ।।२।।

कुतो महोदयाऽपि कल्पनेह धावनाकुले
सदोदरार्थधावितार्थजीवितेऽपि मीविते
प्रदूषणान्विते विनष्टहार्दभावमानुषे
समुद्भवेदतो न चाभ्युदेति काव्यभाः मुहुः ।।३।।

तथापि शारदाविलासलब्धसज्जनः क्वचित्
निजं न रोद्धुमर्हतीति काव्यशास्त्रमोदनात्
सतां पथि प्रचारवान्न शैवमार्गचोदनात्
मया विलिख्यते ततस्सुहृत्प्रियार्थिभावनाः ।।४।।

मोदायन्ते शुभायन्ते धर्मायन्ते च पण्डिताः ।
वीक्ष्यैव यस्य सच्चर्यां तस्मै विप्राय ते नमः ।।५।।
केचिद्वदन्ति नब्बू त्वां तिवारीति परे जनाः ।

नवीनश्चैव नावीन्यैस्तस्मात्त्वं नैव मुह्यसि ।।६।।

मित्रोऽसि च द्विजोऽसीति चायपोऽसि प्रियोऽस्यपि ।
भोपालप्रियविज्ञोऽसि जानन्ति के न मादृशाः ।।७।।
यदास्माभिः कृतश्शोधो भोपाले नैकरञ्जनैः ।
तदा प्रत्यक्षदर्शिंस्त्वं चायाद्यैस्सम्प्रमोदितः ।।८।।

दिनान्ते वा निशान्ते वा मध्याह्ने वाऽप्यहं पुनः ।
श्रुत्वापि यस्य चाह्वानं धावं धावं ह्युपस्थितः ।।९।।
तस्यैव चात्र सम्मोदं कुर्वे भूयस्तिवारिणः ।
चायार्थं यो मया साकं मोटूहोटलयाः[14] अभूत् ।।१०।।

गायं गायं च काव्यानि श्रावं श्रावं गलज्जलम् ।
पायं पायं मुहुश्चायं समान्यत्र गतानि मे ।।११।।
चायार्थं बहुधा नैकस्थलायायी द्विजैस्सह ।
यानान्यथ समारूह्य पदातिर्वापणव्रजी ।।१२।।

नवीनाय बहूनीव काव्यान्येव प्रदर्शयन् ।
संश्रावयँश्च बहुधा कालोऽतीतो हि मामकः ।।१३।।
अहो द्विजानां पुण्यत्त्वं कृत्त्वाऽप्यन्यप्रशंसनम् ।
आत्मानं न प्रशंसन्ति प्राशंस्यं तेन यान्ति ते ।।१४।।

[14] मोटूहोटलं यातीति मोटूहोटलयाः, अत्र मोटूहोटलेत्यस्य संज्ञात्त्वात्तथैव प्रयोगः।

चायचर्चा कृता भूयः शास्त्रचर्चा पुनः पुनः ।
शोधचर्चा त्रिभिर्वर्षैश्शैवीचर्चाऽत्र चर्च्यते ।।१५।।

तिवारिन् मुधा जीवलोके समेत्य जनाः नैकजालानि स्वस्यावयन्ति
निबद्ध्नन्ति चात्मानमेवं मुहुश्च न पारं समेतुं समर्थाः दुरापः
।।१६।।
अहो क्षुद्रजीव्यं तथा नैकदृष्टिः पुनश्श्वासविप्रत्ययस्यात्र यात्रा
वृथा क्रोधकामाकुलः लोभकारी निपत्यापि कूपे विनश्यन्ति नैजम्
।।१७।।
यदाहं वदामि स्म तुभ्यं त्वनेकाः हि बाबागुरोः जीवनस्यापि चर्याः
स वै चात्र लोके शिवे रक्तिमाँश्च स शास्त्रप्रकर्षैस्सदालङ्कृतश्च
।।१८।।
गुरुर्मे वरीयान् सुपूज्यो बुधैश्च प्रशंस्यस्समेषां विभातीह बाबा
स वै वृद्धकेशीशिवे भक्तिमांश्च सदा जाह्नवीस्नानकारी शिवाढ्यः
।।१९।।
गुणीनां स पूज्यो गुणान् वेत्ति पुंसां
न तच्चास्ति शास्त्रं न यद्वेत्ति बाबा ।
सदाऽऽत्मानमागोप्य सन्तिष्ठते यो
रहस्यात्मनिष्ठः शिवात्मा सुशिष्टः ।।२०।।

कदाचित्तिवारिन् प्रयाहि प्रकाशं प्रयातुं शुभे तत्सकाशे सुविद्याम् ।
स विप्रप्रियश्शास्ति शिष्यान् गुणाढ्यान् अतस्तन्नरौरापुरं पुण्यमेहि
।।२१।।

अहो भोजराजप्रभावाढ्यकाव्यं सदैवोज्जयिन्यां च भोपालदेशे ।
ह्युदेति प्रकर्षः कवीनां मनस्सु हिमांशुप्रभाभासिगुण्यात्मवत्सु
॥२२॥
तथैवं नरौरापुरश्श्रीशिवात्मप्रकाशप्रकर्षोज्ज्वलैस्सद्बुधैश्च ।
विभाति प्रबुद्धैश्च माहात्म्यवद्भिश्च सद्भिः पुराणार्थवद्भिः ॥२३॥

अहो ज्योतिषे शास्त्रमार्गे प्रलग्नः
तिवारिन् पचौरीगुरुं द्रष्टुकामः ।
भव त्वं भवे भक्तिपूर्णश्च पूर्णा-
ऽऽश्रमं सम्प्रयाहीति मच्चित्तकल्पा ॥२४॥

हिमांशुश्च रात्रौ दिवा च प्रभांशुः
मखांशुश्च पातु त्वदीयं सदर्थम् ।
यदा यात्रिरूपे नरौराप्रगस्त्वं
नगाँश्चाऽप्यतीत्याऽसि चाऽऽकाशयानैः॥२५॥

हिमाभे मुदाऽध्यापयँश्चैव जम्मौ
स्मरेः किं पुरावासिभोपालभूमिम्?
प्रतीक्षा त्वदीक्षा समीक्षापराऽस्ति
सुभोपालभूमिस्त्वदावीक्षमार्गा ॥२६॥

अहो पूर्वकालस्मृतिर्नेत्रवासा
सदा चित्तलोका न मुञ्चेन्नराँश्च ।

सुहृत्सञ्जहाति प्रयातांश्च रम्यान्
सुहृद्भिर्न साकं गतान् चर्च्यभावान् ।।२७।।

तिवारिन् पत्रमेतद्वै यथोदितसुभावनम् ।
लिखितं चायपानान्ते त्वदर्थं पूर्वरात्रिके ।।२८।।
स्फूर्तभावहयानां वा गतिं रोद्धुं द्विजोऽक्षमः।
शीघ्रं हि छन्दसां मार्गैस्त्वदालोकनतत्परः ।।२९।।

कुत्रचित्तर्पणारक्तः कुत्रचिच्छिवपूजकः ।
क्वचित्तरणमोदी च गङ्गातीरार्थिचिन्तकः ।।३०।।
अहो जीवनचर्याणामव्यवस्था भवेत्सदा ।
जीवनस्य रसो हृद्यो नश्यत्येताभिरर्थवान् ।।३१।।

ये वाऽनियतवित्ताश्च क्लिश्नन्ति कुलपोषणे।
वृत्त्यर्थं धावमानाश्च कथं सन्तुष्टमानसाः ।।३२।।
कविर्वाऽथ भवेद्बोद्धा शास्त्रे चापि श्रमी जनः ।
युवत्त्वे पीडया ग्रस्तः भवेन्नूनं स निर्धनः ।।३३।।

अत आदौ तिवारिन् भोः धनप्राप्तिर्निगद्यते ।
यतश्शास्त्रेषु चार्थोऽपि पुरुषार्थेन गण्यते ।।३४।।
हिमांशुर्हि पुरा यो वा कल्प्यलोकेषु सम्भ्रमन् ।
नानास्वप्नसुदृश्येषु निश्चिनोति स्म शास्त्रकम् ।।३५।।

शिवार्ची वा द्विजार्ची वा यक्षचर्चारहस्यवान् ।
किन्त्वद्य नैव ते भावाः सदा चित्ताब्जगन्धिनः ।।३६।।
विलसन्ति नृणां शान्ते मस्तिष्के नव्यशक्तयः ।
अतस्सर्वप्रयत्नैश्च शान्तिगश्चिन्त्यमाप्नुते ।।३७।।

शतश्लोकात्पुरा चापि काव्यं मे नावरुध्यते ।
किन्तु भोजनकालोऽयं बुभुक्षा मां प्रबाधते ।।३८।।
दूरवाचा कृता वार्ता तिवारिन् यद्यपि त्वया ।
पत्रलेखनमोहोऽयं जागर्त्ति ह्यर्धरात्रिकम् ।।३९।।

अस्मन्मोदनशैली वा ज्ञायतां सज्जनैरियम् ।
मोदायैवात्र सर्वत्र गौडेन चर्यते शुभा ।।४०।।
तुलनां न करोम्येवं न चेर्ष्यामि क्वचिज्जनैः ।
अस्मत्पन्थाः पृथक्चास्ति कविभिश्श्रूयतामिदम् ।।४१।।

न्यूनं चायं पिबाम्यत्र स्वास्थ्यादीनां च हेतुभिः ।
मित्राणां चाप्यभावत्त्वाद्धनाद्यासौ प्रयत्नवान् ।।४२।।
राधे राधे वदामीति महादेवो हरो हरः ।
शयनं याहि भोः मित्र निशा चार्धा गताऽधुना ।।४३।।

दिनाङ्कस्समयश्च – २९-०१-२०१९, ११.३९ रात्रौ ।

स्थानम् - गाजियाबादस्थे गृहे ।।

।।। १७. आचार्यजैनेन्द्रभारद्वाजाय पत्रम् ।।।

****

ज्ञानस्थानां मखस्थानां श्रुतिस्थानां च यत्तपः ।
तत्सर्वं संवदामीव जैनेन्द्र त्वामहं द्विज ।।१।।
नरौरानगरस्थस्य नरवराख्यस्थलस्य यत् ।
तपश्शास्त्रादिचर्याणां माहात्म्यं सर्वदुःखहम् ।।२।।
केचित्तपन्ति सूर्याग्नौ केचिद्गङ्गाजले पुनः ।
केचिच्च बिल्वपत्राणि जग्ध्वैवाऽऽत्मतपोगताः ।।३।।
हे हे विप्र! द्विजानां त्वं सन्मार्गैकप्रदर्शकः।
भूत्त्वा श्रीमद्गुरोः पुण्यैश्शास्ता यूनां विलोकितः ।।४।।
कुटीरे हरिताभासु कदलीकुञ्जमण्डिते ।
नानातर्वन्वितेऽश्वत्थलक्ष्मीच्छायासमाश्रिते ।।५।।
हनुमद्धाम्नि यत्राऽऽस्ते शैवदर्शी महागुरुः।
तत्र त्वं पाठयेः पूर्वं दशवर्षात्पुरा हरेः ।।६।।
धामायितानि वन्यानि स्थलान्यत्र सतां चयैः।
सूर्यपूजासमासक्तैस्सारितानि ह्यपांस्यहो ।।७।।
पाटलोद्यानसद्दृश्यं सर्पराजैर्महाफणैः।
व्यापृतं सौरभैश्चेतोहरं पुण्यसुगन्धिभिः ।।८।।
तस्मिन्शुद्धतमे विप्र नागेशशास्त्रचर्चिते।
लोके ब्रह्मायिते चाद्धाप्यस्मादृग्भिस्समास्थिते ।।९।।
दिने दिने नवं पुण्यं हर्षं वारि हरात्मकम् ।
सम्पीयापि मनो किञ्चिच्चातृप्तं मेस्ति वाऽधुना ।।१०।।
वृद्धिकेशिशिवं नत्त्वा यत्र कालस्सुयापितः ।
करवीरादिपुष्पाणां सुगन्धिश्चानुभूयते ।।११।।

नाकुलत्त्वं गताः केचिन्नागत्त्वं यान्ति चापरे ।
बिडालत्त्वं गताः केचिन्मूषकत्त्वं गताः परे ।।१२।।
लोके पुण्यैश्च पापैश्च जीवानां गतिरीदृशी।
नश्यति श्रौतकर्माध्वमनोवर्तितशैवकैः[15] ।।१३।।
तत्सर्वं यन्मयालब्धं तस्मिन्नारवरे तटे।
सन्यासिनां सुचर्चाभिश्श्रोतापि स्वं पुनात्यहो ।।१४।।
एवं यो श्रोतृरूपस्थो हिमांश्वाख्यो द्विजस्त्वहम्।
तत्रावासैरथो भोज्यैः पाठैस्तृप्तिमवाप्तवान् ।।१५।।
रूद्रपाठं क्वचिच्छ्रुत्त्वा रूद्रात्माहं सुखप्रभः।
भूत्त्वा क्वचिद्वायुरूपो वायुशास्त्रं निशम्य ह ।।१६।।
यक्षलोके क्वचिद्भ्रान्तो गान्धर्वे पुनरापतम् ।
जैनेन्द्र नारकं लोकं दृष्टं चासत्यकर्मणाम् ।।१७।।
किं वदानीव ते शास्त्रिन् कं न दुःखं प्रभेजिरे।
शिवस्य मायया भ्रान्ता विमुखास्तेन वै जनाः ।।१८।।
कोटियत्नसमाप्राप्यं नृदेहं पुण्यसङ्गतिम् ।
दुर्लभं देवताभिश्च को मूढो लोकमीहते ।।१९।।
कीर्तिकञ्चनकामिन्याशानां पाशैस्समाकुलाः।
बद्धाः धावन्ति सर्वत्र दृष्टं कौतूहलं महत् ।।२०।।
ब्रह्मसूत्रं तथा भाष्यं शङ्कराचार्यगुम्फितम्।
पठितं नैकवारं वा श्रीमद्बाबामुखादहम् ।।२१।।
यथा शुकोपि गृह्णीयादाश्रमे निवसन् पदम् ।
तथैव तत्र वसता हेलयाऽप्यहमाप्तवान् ।।२२।।

---

15 शैवा एव शैवकाः । श्रौतकर्मणाम् अध्वा श्रौतकर्माध्वा तस्मिन् मनो वर्तितं येषां, तादृशाश्शैवकाः ।

यथा वा वारिनिचये पद्मपत्रं वसेदहो ।
तथा कोऽत्र महात्मा वा लोकेऽनासक्तधीर्वसेत् ।।२३।।
सिद्धान्तकौमुदी वापि स्याद्वा प्रौढमनोरमा ।
शेखरो नागरचितो भाष्यं वापि पतञ्जलेः ।।२४।।
सर्वं तद्धि मुदा वक्ति विविक्तो वाङ्निधिर्गुरुः ।
श्यामबाबेति विख्यातो नानाशास्त्रविशारदः ।।२५।।
अद्य भावस्समुद्दीप्तो वदामीवाद्य यत्पुनः ।
गुर्वाश्रमस्य सच्चर्यां, जीविता या भवादृशैः ।।२६।।
अद्य गुरुकुलेष्वेवं सुव्यवस्था निदृश्यते ।
सौख्याकूलो भवेत्सर्वं पुरा नो तत्सुकल्पितम् ।।२७।।
पुरा क्लिष्टं क्वचिद्दुःखं प्राप्नुवन्तो गुरोः कुले ।
शास्त्रसौख्यैर्वसन्तो वा प्राप्नुवन्ति स्म शास्त्रकम् ।।२८।।
क्वचिद्वृक्षसमारूढो छात्रवृन्दो विलोकितः ।
क्वचित्काष्ठचयं पृष्ठे वहन् सन् पाककर्मणे।।२९।।
जङ्गलेषूत माङ्गल्यं जनयन्तीव ये जना ।
ते वा नरवरे तत्र लोकनीयाः विराजिताः ।।३०।।
छात्रकालसमाशोभा क्लेशैरेव भवेदहो ।
आस्वाद्य भोगसौख्यानि के न गर्तं प्रभेजिरे ।।३१।।
शताधिकानां छात्राणां भोजनं यत्र निर्मितम् ।
तद्वै स्वपाकसुश्रान्त्यास्वाद्यं खाद्यं मतं जनैः ।।३२।।
पाचको वा कुतोऽन्विष्यो स्वयम्पाकी भवेज्जनः ।
शास्त्रैश्चापि मुहुः प्रोक्तं - स्वयं दासास्तपस्विनः ।।३३।।
अहो तानि दिनान्येवं स्मृतिं रोहन्ति मे सदा ।
यदा शीतेषु ग्रीष्मेषु वासन्ते वाऽप्यहं पुनः।।३४।।

गङ्गाजलावगाहेन चाऽऽत्मतृप्तिङ्गतो द्विज ।
पुण्यानि हृष्टिसंल्लब्धिं गतश्शैवशुभान्यपि ।।३५।।
तदा षोडशके वर्षे नव्यतेजस्समाश्रिते ।
देहे काऽपि नवा स्फूर्तिर्नव्या भक्तिश्च जागृता।।३६।।
गणेशपञ्चकस्तोत्रं गङ्गायाः लहरी उत ।
अन्नपूर्णामहास्तोत्रं पठ्यते भवता मया ।।३७।।
कपेः भक्तिश्शिवे सक्तिस्त्यज्यते नैव कर्हिचित् ।
दुर्गापाठैर्वयं प्रायो किं न सद्भासिताङ्गताः ।।३८।।
शीततौ सार्षपैस्सर्वे मर्दयन्ति स्वकं तनुः।
सूर्यातपसुखे तेन त्वग्रक्षायां सदा रताः।।
यतो धर्मश्च विद्या च सर्वं जीवनकाङ्क्षितम्।
शरीरेणैव सम्प्राप्यं ह्यतस्तद्रक्षयेन्नरः।।
हे द्विजाऽद्याऽस्ति मद्वाणी नानारङ्गैर्विरञ्जिता ।
तथाऽप्यत्र न जानेऽहं कथं वच्मि स्वभावनाम् ।।३९।।
काव्यरीतिं न जानामि गुणाढ्यो वा कुतोऽस्म्यहम् ।
यथा तथा प्रवर्तेऽहं पूर्वजीव्यनिदर्शने ।।४०।।
दूर्वाशाश्चापि बिल्वाशाः निम्बाशाश्च द्विजा इह ।
अश्वत्थस्य फलाशाश्च निराशाः नैव कर्हिचित् ।।४१।।
दिव्याशा वा सदाशाः वा शिवाशाः ये वसन्ति वा ।
दैवीभाषासमुद्रक्ता विरक्ता भान्त्यहो द्विजाः ।।४२।।
कौपीनधारकाः केचित्केचिद्वस्त्रद्वया इह ।
शुक्लपीतसुरक्तैस्सद्धूक्ताः वस्त्रैर्लसन्ति वै ।।४३।।
केचिज्जुह्वति होमाग्नौ चित्ते दुर्गां स्मरन्ति च ।
केचित्स्वर्णनिभं देवं वन्दन्ते विघ्ननाशकम् ।।४४।।

शिवपुत्रं गजास्यं तं मूषके राजितं गुरुम् ।
अङ्कुशाभयशङ्खाढ्यं मोदकात्तं शुभप्रदम् ।।४५।।
नित्यं हस्तचतुष्कैश्च त्रायमाणं भवार्णवात् ।
भक्तानामिष्टदं लोके दर्शितात्मस्वरूपकम् ।।४६।।
भ्रमन्तं क्षणमात्रे च ब्रह्माण्डे स्वेच्छया प्रभुम् ।
महैश्वर्यं सतां वर्यं ब्रह्मचर्यप्रियश्रियम् ।।४७।।
केचित्त्र्यम्बकमन्त्रैश्चाऽप्यश्नुवन्ति शिवं दिवम् ।
प्रयान्ति स्वर्गमन्ये वा शिवप्रीत्यैव केवलम् ।।४८।।
षट्कर्माण्याचरन्तो वै द्विजास्सर्वैस्सुपूजिताः।
वेदाश्रयाश्शिवत्त्वं वै जीवने संव्रजन्ति ते ।।४९।।
ज्योतिषे निपुणाः केचिन्नक्षत्रसूचकाश्च ये ।
कर्मकाण्डे समे विप्रा रता नानापुरेषु वै ।।५०।।
किन्तु शब्दप्रधानत्त्वं लभ्येतात्र शुभे तटे ।
पदशास्त्रं समे वेदे तिले तैलमिव स्थितम् ।।५१।।
अजानन्तो हि तात्पर्यं कथं तत्तत्त्वदर्शिनः।
मन्त्रोहास्वपि शक्ता वा कथं व्याकरणं विना ।।५२।।
स्वरं वापि समासं वा सन्धीन् कृत्तद्धितानपि ।
यङ्सन्क्यच्प्रत्ययान्वापि विदन्तीह जना न ये ।।५३।।
अहो सीदन्ति सर्वत्र पौरोहित्यादिदर्शने ।
साहित्ये वापि पठने शब्दार्थस्य विनिर्णये ।।५४।।
प्रसङ्गौचितिदेशादीन् वेत्ति चेदपि यो जनः।
संयोगं विप्रयोगं च वाक्यार्थे न स सीदति ।।५५।।

काकेभ्यो दधि रक्ष्यतामिति यदा कैश्चित्प्रयुक्तं जनैः

तत्र त्वं दधि रक्षयेः द्विज तदा काकाद् , विडालान्नहि
व्यर्थं तत्तव मौर्ख्यदर्शकमहो, काकोपलक्ष्यादिकं
काकव्याजवशाद्भवन्ति सकलाः दध्नश्च ये भक्षकाः ।।५६।।

रामरावणयोरत्र रामः कस्त्विवति चिन्तयन् ।
रावणस्य विरोधित्त्वाद्रामो दाशरथिस्त्विह ।।५७।।
रामकृष्णाविहाऽप्येवं को रामो यदि शङ्क्यते ।
कृष्णशब्दस्य संयोगाद्बलरामोऽत्र गृह्यते ।।५८।।
एवं नैकेषु शास्त्रेषु सन्देहान् दहति द्विजः ।
शब्दशास्त्रप्रभावेण सर्वे यान्त्यर्थनिश्चयम्।।५९।।
गुणद्रव्यौ तथा कर्म सामान्यं च विशेषता ।
समवायोऽप्यभावो वा मुक्तावल्यां प्रकाशिताः।।६०।।
वदाम्यत्र तु सर्वेषां शब्दानामपि सार्थता ।
सर्वशास्त्रप्रसङ्गेषु चान्यत्त्वं याति निश्चितम् ।।६१।।
यथा गुण इतीहायां साङ्ख्ये तत्त्रिगुणं मतम्।
रजस्सत्त्वतमोभेदैः प्रकृतेस्ते त्रयो गुणाः।।६२।।
चतुर्विंशतिसङ्ख्याकाः तर्के ते वै गुणाः मताः।
गन्धस्पर्शसुखेच्छाद्याः सङ्ख्यारूपरसादयः।।६३।।
शोभा विलासो माधुर्यमित्याद्याः ये गुणाः मताः।
साहित्यदर्पणे ते वाऽप्यष्टौ तत्र प्रकीर्तिताः।।६४।।
व्यञ्जनार्थे मनुर्वक्ति सूपशाकादिकान् क्वचित् ।

आवृत्तिश्चापि[16] विज्ञेया गुणशब्देन भारते[17]।।६५।।
रपरो लपरश्चापि ह्रस्वाकारेण संयुतः ।
अरलौ गुणसंव्यक्तौ शब्दशास्त्रे ह्यदेङ्गुणः ।।६६।।
ये रसस्याङ्गिनो धर्माश्शौर्यादय इवात्मनः।
काव्यप्रकाशे सम्प्रोक्ता गुणाः दशविधा अहो ।।६७।।
दया क्षान्तिस्तथा शौचं मङ्गलं चास्पृहापि वा ।
अनसूया ह्यकार्पण्यं स्मृत्युक्तास्ते गुणाः मताः।।६८।।
एवं सर्वप्रसङ्गेषु शब्दा नानार्थकाः मताः ।
शास्त्रोपायैर्विनिर्भ्रान्तिस्सर्वं तत्प्राप्नुयात्सुधीः ।।६९।।
विद्वन्नायुर्द्रुतं याति जीवनं क्षणभङ्गुरम् ।
यौवनं कामिनीभोगव्याकुलं तृष्णयाऽऽकुलम्।।७०।।
बाल्ये क्रीडनकासक्तं वृद्धत्त्वे मोहसंवृतम्।
कथं वा त्यजति वा प्राणान् हरेश्चिन्तनशून्यकः।।
हा हा भ्रान्तिं कुतो याति मे मनस्सर्वतोऽधुना।
त्यक्त्वा विजल्पनं सर्वं शङ्कर!त्वामुपाश्रये ।।७१।।
अन्यद्ब्रवीमि लोकानां या स्थितिर्मोहमग्नता ।
अहोऽप्यल्पे सुजीव्येऽत्र संसारं सन्त्यजन्ति के ।।७२।।

लेखनकालो दिनाङ्कश्च – ०३-०५ अपराह्णे, २७-११-२०१९,

स्थानम् – गाजियाबादस्थगृहे ।

---

16 आवृत्तिस्त्विवति। आहारो द्विगुणस्त्रीणां बुद्धिस्तासां चतुर्गुणा । षड्गुणो व्यवसायश्च कामश्चाष्टगुणस्स्मृतः ।। इत्यत्र गुणशब्द आवृत्तिवाचकः।

17 महाभारते।

||| १८. श्रीमल्लक्ष्मीनारायणपाण्डेयेभ्यः पत्रम् |||

****

लक्ष्मीनारायणं वन्दे काव्यकारं नवप्रभम् ।
भोपालवासिनं विप्रं कविबोद्धृप्रसिद्धिगम् ।।१।।
भवत्काव्यानि नव्यानि मुखपृष्ठागतानि च ।
सुप्रभातानि भातानि नृणां चित्तेषु चान्वहम् ।।२।।

श्रीमन्नैकदिनैरहं तु कवितानन्दैर्दिनादौ क्वचित्
भावत्कैश्च तथार्धरात्रिलिखितैर्हृष्यामि गेहे स्वके
निद्रा यद्यपि पीडयेन्न नयने, जागर्मि तावत्सदा
तस्मात्ते मुखपृष्ठ[18]नव्यरचनाः पठ्यन्त एवं मया ।।३।।

आश्चर्येण पुनश्च सर्वजनताः युञ्जन्ति ते नन्दनम्
नान्यत्रापि रमेत चित्तरमणस्त्वत्काव्यरामाश्रितः
एवं च प्रतिभां धरेदथ भवान् स्वीयैः मनोमोदनैः
मादृक्काव्यपिपासुचातकनृणां स्वात्यम्बुमुग्[19] वर्षति ।।४।।

मन्दं मन्दमितीह यास्ति कविता सा तु प्रसिद्धिङ्गता
भोपाले श्रुतवानहं कविवरैरालोकिते मण्डपे
शोधच्छात्रतया मयापि रचना तत्रैव संश्राविता
संस्थाने हि पुरा विभिन्नरसमुग्वर्षासु सम्मज्जता ।।५।।

---

[18] मुखपृष्ठ – फेसबुक इत्यर्थः।

[19] मादृक्काव्यचातकनृणां स्वातिनक्षत्रस्य अम्बुमुग् भवान् वर्षतीत्यर्थः ।

वेद्मि स्म नैव तव शिष्टविशिष्टरूपं
तत्रत्यमित्रगणकं न च पृष्टवान् वा ।
पश्चाच्च दृष्टमुखपृष्ठकविप्रसादो
मध्ये दिने परिलिखामि विचारितं स्वम् ।।६।।

देवभाषाऽथवा राष्ट्रभाषाऽथवा ग्राम्यभाषाऽथवा भावविख्यापिनी
प्रत्यहं वेदनाकाव्यधाराः मुदा श्रीलनारायणैर्वाहिताः नैकशः।।७।।

मादृशस्तु जनो विद्वन् कविताकृष्टचेतसा ।
संवेदनपरं लोके ख्यापयेच्छक्तिमाश्रितः ।।८।।
बहुधा चान्यकवयो परकाव्येषु मत्सराः।
कवयो नैव काकास्ते दोषमात्रैकदर्शिनः।।९।।

नहि चान्यं प्रशंसन्ति द्वेषभावभृतो जनाः
त्रुटिलेशं समालोक्य दुष्प्रचारं चरन्ति च ।
विद्वान्सो नैव ते धूर्ताः , पूज्याः नैव च कर्हिचित् ।
सौजन्यं वीक्ष्य दातव्यं सम्मानं च धनं तथा ।।११।।

रुचिर्मे वर्तते श्रीमन् विद्वद्भ्यः पत्रलेखने ।
अतश्चित्तप्रमोदाय कल्पश्चायं प्रकल्प्यते ।।१३।।

हिमांशुगौडः

लेखनसमयो दिनाङ्कश्च – ३.०० अपराह्ने, ०३-०४-२०१९

स्थानम् - गाजियाबादस्थे गृहे ।

||| १९. प्रो.देवीप्रसादद्विवेदिभ्यः पत्रम् |||

****

शिक्षालोकात्क्वचिद्भाष्यं प्रसरेद्यत्र सन्नृणाम् ।
तत्र व्याख्यानमालोक्य प्रशंसन्ति बुधास्सदा ।।१।।
शिक्षादर्शनमाख्याति यश्च शास्त्रप्रवर्तितम् ।
पाश्चात्यदर्शनं चापि स्वशैल्यैव निरूपयेत् ।।२।।

विद्वन्! विप्र! शृणोत्वद्य चास्मच्चित्तप्रकल्पनम् ।
बुधमित्रगुरुभ्यश्च भावपुष्पसुगन्धिदम् ।।३।।
गौडश्चाहं हिमांशुर्यो नरौरानगरे पठन् ।
श्रीमद्बाबागुरूद्भासैर्भासितं मज्जगद्ध्रुवम् ।।४।।

भावत्कं च वपुर्यश्च देवीभक्तिप्रदर्शकम् ।
तस्मात्स्वनामधन्योऽस्ति भवन्तं प्रणमाम्यहम् ।।५।।
सनातनस्य धर्मस्य गर्वं सन्धृत्य भोः बुध ।
भवादृशो हि लोकेऽस्मिन् विचरन्त्यात्मगौरवैः ।।६।।

अल्पभाषी च सङ्कोची नैकैर्वर्षैर्वसन्नपि ।
परिचेतुं न शक्नोमि नाधिकैर्वा जनैः क्वचित्।।७।।
किन्तु लेखनपन्थानं वितनोमि मनोगतम् ।
येन मच्चित्तसद्गन्धिं जिघ्रेयुर्मद्दृशङ्गताः ।।८।।

शिक्षाशास्त्रितया मया न बुध! वाऽवाप्ता सुवृत्तिः क्वचित्

काचिद् व्याकरणाच्च लब्धसुविधा त्यक्ताऽपि नैवं पुनः
काव्यं त्वात्मसुतुष्टये रुचिगतः तन्वे स्वचित्तानुगः
जीव्ये नाधिकमिच्छति द्विज उत प्राप्तप्रसन्नोऽस्म्यहम् ।।९।।

शोधश्चापि कृतो मया स्वरगतो व्याकृद्दिशा पाणिनेः
भोपालस्थपरीसरे[20] बुधभृते श्रीदाशनिर्देशनैः
आश्चर्यैश्च युतो भवामि मतिमन्नाऽऽयुर्दिनानीह हा
मुष्टिस्थैस्सिकताकणैरिव शनैर्नश्यन्ति चायुष्मताम् ।।१०।।

किं दुःखाधिकमत्र तत्र करणं किं वाऽश्रुवाहोऽधुना
क्वाचित्केन निदृष्टजीव्यमखिलं वा वारिवाहोऽथ च
वर्षेन्नैकसुखाशहाससलिलं नश्येत्क्वचिद्वायुना
तस्मात्सर्वसुयत्नरत्नपदवी शैवीकथां गच्छति ।।११।।

श्रीमन्नस्मत्स्वभावोऽस्ति सर्वेभ्यः पत्रलेखनम् ।
रागो लोभो न मोहो वा कारणं चात्र विद्यते ।।१२।।
एकान्ते सौख्यसंस्थाने यत्र स्थित्त्वापि भोः द्विज ।
यस्य स्मृतिस्समीयान्मे तस्मै पत्रं लिखाम्यहम् ।।१३।।

अधिकं किं ब्रवामाऽद्य शास्त्रमोदैककाङ्क्षिणः।
श्रद्धाविश्वाससंयुक्तान् धरामो हृदये शुभान् ।।१४।।

---

20 परीसरः – परितः इं (इकारं) शक्तिं सरति प्राप्नोति इति परीसरः। छन्दःपारवश्यात् परिसर इत्यस्य परीसरे कृते व्याख्यानलभ्यमेतद्रूपं कृतम् ।

प्रेषको - हिमांशुर्गौडो

लेखनसमयो दिनाङ्कश्च – १०.४३ रात्रौ, चायपानान्तरम्, १९-०४-२०१९

स्थानम् – गाजियाबादस्थे गृहे ।

||| २०. प्रो.जनार्दनमणिपाण्डेयेभ्यः पत्रम् |||

****

श्रीमज्जनार्दनमणे! कविहर्षिविद्वन्!
मोदङ्गतो गुरुवरः कविताप्रकर्षैः ।
पाण्डेय इत्यभिहितो जनमान्य! विप्र!
श्र्युत्कर्षवर्षिजलदो वचसां प्रभावैः ।।१।।

श्रीमान्योऽप्यभिराजमिश्र इति वा काव्येन सत्कीर्तिमान्
शिष्यस्तस्य जनार्दनो मणिरिति ज्ञायेत लोकैरहो
काव्याकाशरवी ह्युभौ जनगणैरर्च्यौ महान्तौ जनौ
संसारे प्रसरेच्च दिव्यमधुरा धारा बुधैर्वाहिता ।।२।।

जीवनं वेदनावारिणा सम्भृतं यच्च काव्यं श्रुतं स्त्रग्विणीसंयुतम्
भावभाभासितं वै व्यथादर्शकं को न मुग्धः प्रजायेत चाकर्ण्य तत्
।।३।।

अहं भोपालस्थः परिसरगतश्शोद्धृपदगः
भवन्तं संलोक्यापि न परिचितो हेतुवशगः
प्रयागे चायाते मयि परिसरे कार्यपथके
तदा योगेशेनाशुरथ भवतो दर्शनमयाम् ।।४।।

तदा मत्काव्यानि श्रुतिनतिपराणीह भवता
विलोक्यावोच्च्येतन्मम शुभभविष्यैषणमपि
मयाऽर्कस्य श्रीमत्कमलपतिसूर्यस्य शतकम्

श्रितं यत्तच्चाद्य प्रणतिपरवाचा विरचितम् ।।५।।

तुलास्थांशुमान् पञ्चमस्थो निदृष्टो
बुधश्वेत[21]युक्तोऽस्ति मज्जन्मपत्रे ।
सदा दैववाग्भिः समुक्तं कुरुष्व
पृषा[22]शान्तिमौन्नत्यसौख्यं लभस्व ।।६।।

अतो विवस्वतश्शती कृता मया नतेस्ततिः
प्रसादमाप्य मत्प्रभां प्रवर्धयेच्च भास्करः ।
मुदाऽर्चनैकपद्धतिस्सृता कवित्त्वसंश्रिता
प्रिया हि मालिनीनिबद्धचेतसा सुमङ्गला ।।७।।[23]

श्रीमन् बहून्यपि भवत्कवितापराणि
गानानि संविरचितानि सुखङ्कराणि ।
इच्छेत् सुगायितुमथापि च हार्दिकस्सन्
विप्रो हिमांशुरिति योऽस्ति कविप्रमोदः ।।८।।

क्षणकण इह सद्भिर्नैव हेयः कदाचित्

---

21 बुधश्वेतयुक्तः – बुधेन, श्वेतेन (शुक्रेण) च युक्तः ।

22 पृषा – सूर्यः ।

23 द्रुतं हि तत्प्रकाशनाय दास्यते मया तथाशिषां वचांसि काङ्क्षितानि चादिपृष्ठकानि ते । अहो हि जीवनप्रभा विलुप्यतीह वै नृणां तथापि मुञ्चतात्कथं सुजीवनस्य काङ्क्षणम् ।। इत्यधिकोऽपि पाठान्तरः ।

फणिकृतशुभभाष्यं सर्वदा चावगाह्यम्
सुरवचनसुकाव्यानीह यस्य प्रभान्ति
मणिकृतरसकाव्यं सर्वदा चापि पेयम् ।।९।।

रविभ्यश्च कविभ्यश्च बुधेभ्यश्चिन्तनाश्रितम् ।
पत्रं छन्दोनिबद्धं वै गौडेनात्र विलिख्यते ।।१०।।
मित्रेभ्यो वा गुरुभ्यो वा मनस्स्फूर्तिप्रदायकम् ।
हेतुं दृष्ट्वाऽप्यदृष्ट्वा वा पत्रलेखनतत्परः ।।११।।

गुरूणामाशिषाकाङ्क्षी मित्रमोदैकचित्तधृत् ।
कनिष्ठप्रेरणाकारी शब्दस्थो वच्मि स्वप्रथाम् ।।१२।।

लेखनसमयो दिनाङ्कश्च – १.५३ मध्याह्ने , २६-०४-२०१९,
चायपानानन्तरम् ।
स्थानम् - गाजियाबादस्थे गृहे ।

॥ २१. श्रीमत्र्यम्बकेश्वरचैतन्यमहाराजेभ्यः पत्रम् ॥

****

लालित्यैरक्षरैश्च प्रतिपदमनिशं मोहभङ्गैकनिष्ठैः
ताराम्बायास्स्तवोऽहो लसति नवपदस्थापितश्रद्धया च
यात्राभिर्दर्शनाद्यैर्विविधकलनदक्षस्य चित्तानुसारी
सद्भावानां प्रथापि प्रवहति बहुधा त्र्यकम्बकस्य प्रभावात्॥१॥

ताराम्बास्तुतिरत्र संविलसिता नव्यैः पदैर्गुम्फिता
श्रद्धाभावसृता मुदा यतिकृता लोकप्रदाऽलोकदा
यात्रादर्शनहार्ददृश्यमिव वा सम्पीयते तन्मया
किं वा चात्र वदानि यद्रचयिता स्यात्त्र्यम्बको हि स्वयम्॥२॥

ताराम्बा बत तान्त्रिकैर्दशमहाविद्यासु सङ्गीयते
वामाचारिपरम्परापृतजनैस्तद्वत्पृथक् साऽर्च्यते
नानापद्धतिपूजिता जगति संव्याप्ता जयेत्तुष्टिदा
सद्यो येन महाफला भवतु सा तन्मे यते! दिश्यताम्॥३॥

नाहं चाद्य वनानि गन्तुमथ वै संसक्षमः कार्यभाक्
विद्वन्! नैव गृहस्थलीनपुरुषैः क्लिष्टा क्रिया चर्यते।
अस्मत्पुष्पचयाशुतोषशिवराट्पूजादिनानीह वा
श्रीबाबाश्रमवासकारिसुखदानीति प्रसीद्योऽधुना ॥४॥

किन्त्वर्चा सफला भवेद्यदि च तुस्सर्वं स कर्तुं क्षमः

तारांम्बा यदि सम्प्रसीदतु मयि श्रीकानि दातुं क्षमा
का चिन्ता हि वृथैव मोहजनकस्याऽस्यापि लोकस्य वा
सर्वं त्यक्तुमथ प्रवृत्तमनसा तारा तदा सेव्यते ।।५।।

यात्वालोकजगन्निदृश्यपदभाक्चैवेन्द्रियाणां गण:
नानालोभनिसेचकैश्च विषयै: नो मां मुधा तर्पयेत्
आकृष्येव मनोमृगान् कुविषयाणां व्याधगीतिश्च हा
हन्ति क्रूरतया , ह्यतो नरवरैस्त्याज्या इमे यत्नत:।।६।।

चर्यते ह्यधुना श्रीमन् दूरभाषेण टङ्कणम्।
मध्येऽन्यजनसम्पर्कात् सहसा तन्निरुध्यते ।।७।।

व्यर्थं न भ्रमणं मया रुचिकरं सम्मन्यते कुत्रचित्
आलस्यं विदधामि निद्रिततनुस्तद्दुर्ग्रहाणां वशे
यात्रा यद्यपि वाञ्छताऽपि न कृता स्वास्थ्यादिहेतुस्त्विह
प्रामुख्यं प्रतियाति, कार्यविनति:, किं वा वदानीह ते ।।८।।

देवस्थानगतिस्तु कैश्चिदिव वा पुण्यौजसा प्राप्यते
पुण्यं चापि सुरत्त्वमेव नयताज्जीवानिति श्रौतगं
तीर्थादिभ्रमणान्मनो नवनवत्त्वं याति पुंसामहो
धर्मभ्राजकतथ्यसङ्कलनकृच्चित्तं तदा लक्ष्यते।।९।।

ताराम्बापञ्चकालोकभावजागृतिकारणात् ।
पत्रं चैतद्यतीन्द्राय लिखितं त्र्यम्बकेश्वर ।।१०।।

लेखनसमयो दिनाङ्कश्च – ०१.२२ मध्याह्ने , २७-०४-२०१९,

स्थानम् – गाजियाबादस्थे गृहे ।

॥ २२. श्रीसन्दीपोनियालाय पत्रम् ॥

****

त्वमुनियाल! नगप्रिय! भासि मे निखिलतापहरी सुरभूश्च वा
सुरसरी प्रवहेत्सुखदा यतोऽप्यनलवात इह क्व तुदेज्जनान्।।१।।

कविधियीह सदोद्भवति प्रभा नवकलाक्रमकेलिकृतान्वया
जनगणप्रियचित्तसुतोषदा ह्यनलवातऋतौ ऋषिकेशगः।।२।।

बुध! मुधैव सुधामपहाय हा
विषमधोगमिनः कुधियो मधु
इति धिया विधिहाश्च विधुन्तुदा
इव पिबन्ति सदेन्द्रियदासकाः।।३।।

द्विज! इमान्परिहाय धनादिकान् परिचरेच्छिवकृत्सुखशान्तिदं
तमथ मार्गमहो प्रवहन्ति वा शुभभृतास्सरितास्सुजलाः यतः।।४।।

अलिकुला सुमनोल्लसिता लता विहगरावरतं नवलं वनं
मधुमये मधुवर्षिसुहर्षिणी जलझरी सुसरो जलजैर्युतम्।।५।।

कलियुगे क्व जनैरथ दृश्यते ह मधुमासमधूनि वधूर्विधोर्-
धवलरश्मिनिशासु रतेस्सुखं ह्युपवने भवने विपिने कुतः।।६।।

अहह वित्तसमीप्सुजनोऽधुना किमिति किन्न समाचरतीह हा
स परिवेत्ति च यद्यपि जीवनं तडिदिव प्रतिभाति न मुञ्चति।।७।।

न विमलं सलिलं परिलोक्यते न कमलं , न सरांसि बहून्यपि
न च विरुक्फलमत्र निकल्यते कलकलध्वनितं क्व नदीजलम्।।८।।

अत इदं परिधार्य मनोऽनुजं कुरु सुनिश्चितमेव हि तद्गतिं
अविगतेस्सुगतिस्सुरतीरिणी वयमहो ऋषिकेशतटानुगाः।।९।।

यदि भवेत्क्वचिदर्थविकल्पनं कवनलास्यसुखास्यसुभाषणम्
शिवपदाब्जरतिर्हृदि जाग्रताः तदथ याहि च देवनदीतटे।।१०।।

शोधकार्यप्रसिद्ध्यर्थं नव्यचिन्तनहेतवे।
जाह्नवीतीरसंसेवा वरा वर्यैर्वरप्रदा।।११।।

लेखनसमयो दिनाङ्कश्च - १०:१८ रात्रौ, १४/०५/२०१९

स्थानम् - बहादुरगढस्थे गृहे।

||| २३. श्रीमत्कौस्तुभमिश्राय पत्रम् |||

****

भोपालस्थे हि संस्थाने प्रथमे त्वागते मयि ।
ऐदम्प्राथम्यरूपेण कौस्तुभो दृष्टिमागतः ।।१।।
तस्य कक्षस्य पार्श्वे हि मह्यं कक्षं प्रदत्तवान् ।
छात्रावासस्य चाध्यक्षः त्रिपाठी यो बहादुरः ।।२।।

सायङ्कालीनदृश्यं च गवाक्षाल्लोक्यते मया ।
स्वर्णरश्मिभृते सूर्ये चतुर्थे च तले ततः ।।३।।
तदा परिचितो मिश्रः कौस्तुभो हनुमत्प्रियः ।
नैकमोदान्वितः प्रायः मद्विचारानुचित्तवान् ।।४।।

आवयोरुभयोः किञ्चिद्वैमनस्यं यदा कदा ।
विचाराणां हि वैभिन्न्यात् क्वचिद्वा दृष्टिगोचरः ।।५।।
किन्तु यश्छात्रकालोऽस्ति पुनरायाति नैव सः ।
एतत्सत्यमधीत्यैव स्मृतिस्साप्यद्य मोददा ।।६।।

सार्धत्रिवर्षपर्यन्तं सार्धं मोदं गतौ ह्युभौ ।
नानाकथासुधास्वादैः रात्रिजागरणैरपि ।।७।।
भवान् चायकपं नीत्त्वा जागर्त्यपररात्रिके ।
मह्यं चापि सुचायं च बहुधा त्वं प्रदत्तवान् ।।८।।

दुग्धे समाप्तिमयिते नाहं खिन्नोऽभवं तदा ।

कौस्तुभस्य च पार्श्वे तु दुग्धं भवति सर्वदा ।।९।।
सर्वदा चायपानेन नैककौतुकसम्भृतः ।
शोधकालो गतोऽस्माकं स्मृतिस्तस्याधुना मे ।।१०।।

अखिलेशत्रिपाठी वा पूर्वोत्तरप्रदेशकः ।
स्वभ्रातुः डॉनगाथां स श्रावयन् मां मुहुर्मुहुः ।।११।।
काशीस्थानां च विदुषां कथां चैव महात्मनाम् ।
ग्राम्यानां च कथां प्रायः रुचिपूर्णां विवक्ति वा ।।१२।।

यथाऽहं त्वां विजानामि त्वं मनस्सारिमानुषः ।
गभीरस्त्वं कदाचिद्वा क्वचिन्नर्तनतत्परः ।।१३।।
मित्रप्रेमी कदाचिद्वा क्वचिच्चैकान्तसुप्रियः ।
किन्तु दुःखार्तमित्रस्य सदा साहाय्यतत्परः ।।१४।।

युद्धं यत्प्रेमनिभृतं सर्वेभ्यश्चैव मोददम् ।
दृश्यते शोधकैस्ते वाऽप्यखिलेशत्रिपाठिना ।।१५।।
तत्स्मृत्त्वा बहुधा सोऽसौ तिवारी[24] हास्यतत्परः ।
मोटूहोटलगन्ता यो मार्गे तद्वर्णयन् क्वचित् ।।१६।।

नानहास्यपरो यश्च मया साकं हि चायपः ।
आवयोः पिबतोश्चायं आगच्छन्त्यन्यमित्रकाः ।।१७।।

---

[24] नवीनतिवारीत्यर्थः

तेषामपीह बहुधा रूप्यकाणि ददाति यः ।
प्रायशः चायदानाय धनं नो गणयेच्च सः ।।१८।।

अधुना कौस्तुभ त्वं वा स्वश्रमैर्वृत्तिमाप्तवान् ।
मोदसे धनसुप्राप्त्या त्वच्छुभं कामयामहे ।।१९।।

श्रीमत्कपीशचरितं हृदये निधाय
भक्त्या गतो हि परिनिष्ठितपूजया च ।
सेनानियुक्तिमथ धर्मगुरोः पदं त्वं
सम्प्राप्य जीवनकलां कलयेः सुहृद् भोः ।।२०।।

कुत्र मित्राधुना भ्राजते वै भवान्
कुत्र वा मन्दिरे देवपूजारतः ।
सैनिकाध्यक्षवर्येण सम्प्रेरितो
वा नियुक्तोऽस्ति बोद्धुं समीहाऽस्ति मे ।।२१।।

दूरभाषेण वार्ता कृता नो मया त्वत्सहैवेति मन्येऽपि मासाधिकात् ।
अद्य कालं समीक्ष्यैव पत्रं द्रुतं संस्कृतैस्स्वीयशब्दैश्च संरच्यते
।।२२।।

लेखनसमयो दिनाङ्कश्च – १०.३६ रात्रौ , २९-०४-२०१९,चायपानानन्तरम्

स्थानम् – गाजियाबादस्थे गृहे ।।

||| २४. डॉ.अखिलेशत्रिपाठिने पत्रम् |||

****

किं ब्रवाणि प्रभावं शिवस्य द्विज!
विश्वनाथस्य काशीस्थितस्याऽद्य वा
तत्कृपा तद्दया जीवनोद्धारिणी
तं ह्यनाथैकनाथं नमामो वयम् ।।१।।

त्वं सदा शास्त्रिभिश्शोभिते श्रीयुते
विप्र ! वाराणसीसत्पुरे चावस:
तत्र विद्वत्सदानन्दलाभश्रियो-
द्भासितं जीवनं ते मया संश्रुतम्।।२।।

संस्कृतज्ञोऽसि विद्वन्निदर्शैरपि
प्रीतिभावैश्च सिक्तो मयाऽऽलोकितो
ग्रामसुस्नेहगाथान्वितश्शैक्षिके
सत्पथे वर्धितोऽसीति सर्वैर्मतम्।।३।।

त्वं निराशो न वा त्वं सदाशोऽस्यपि
विप्रकैलासदाशप्रसन्नस्सदा
पाठने भावविज्ञापने बोधने
त्वद्धृतिं को न जानाति वाऽत्र द्विज!!४!!

चायपानं मया स्वप्रकोष्ठेऽन्वहं
कारितस्ते दिनान्ते दिनादौ क्वचित्
नाऽऽपणे चायपानाय यासि स्म वा
चेत्यपि त्वत्कृते स्मारयामीह भो।।५।।

प्रायशश्शोधकाले मुहुर्जल्पनै:
काव्यगानैश्च कालं व्यनैष्टामुभौ
ग्राम्यलोकस्य चित्रं समादर्शयन्
त्वं मयाऽऽलक्षितो याहि मोदं सदा।।६।।

त्वन्नियुक्तिं निशम्यास्म्यहं मोदितश्
शिक्षणे सुप्रयुक्त्या पुनर्बोधितो
याहि चौन्नत्यखं कामये श्रीशिवं
नाभिमानत्त्वमेहि क्वचिद्भो सुहृत् ।।७।।

कौस्तुभं सुस्मर स्वं च मित्रं द्विज!
येन साकं समश्शोधकालो गतो
तत्स्मृतेश्चापि चित्रं सुचित्ते तवा-
ऽधिष्ठितं निष्ठया सुप्रतिष्ठां व्रजे:।।८।।

यत्र कुत्रापि याया: कवीनां गणे
तत्र सुप्रीतिभक्त्यादिभावान्वितै:
राष्ट्रभाषाश्रितै: स्वीयकाव्यैर्द्विज!
श्रोतृवृन्दप्रशस्तिं प्रयाहि श्रियम्।।९।।

त्वं च नानाकथारूपणे दक्षतां
सन्दधासीव चैतन्मया लोकितम्
गीतिकाश्रावणे गल्पनेपि क्वचित्
सौख्यमेसि स्म छात्रालये भास्करे।।१०।।

माधुराम्लस्मृतिश्लिष्टकालस्स वै

शोद्धृमित्रैस्समं यो व्यतीतस्त्विह
रम्यभोपालदेशे सुखैश्शोभन!
किं विनष्टुं स शक्य: कदाचित्स्मृते:।।११।।

योऽखिलेशोऽस्तीति पाण्डेय आख्यायुत:
सोऽपि लेखादिरक्त: कविस्तत्र, यत्
काव्यसम्मेलनं तेन चायोजितं
किं स्मृतौ ते तदानीन्तनं विद्यते।।१२।।

सर्वनीतिं निशायां दिवायां च वा
चर्चयन् मोदमाप्तो हिमांशुर्हि यः
तुभ्यमद्यास्ति पद्यार्पणे संरत:
तान्यहान्यद्य सुस्मारयेत्सोऽत्र वै।।१३।।

के परेषां गुणैर्मोदिता भूतले
के परेषां सुखैस्सौख्यचित्ताश्च वा
द्वेषदोषान्विता मानवास्सर्पतां
सम्प्रयान्तीव चैतन्मया लोक्यते।।१४।।

किं ब्रवाणीह चोत्कर्षतां सङ्गते
वित्तकृन्मोदशिक्षाश्रिताजीविनि
प्रत्ययस्ते शिवेऽहो प्रभावङ्गतस्-
त्वत्सुभावोऽद्य साफल्ययुग्दृश्यते।।१५।।

....

प्रेषको हिमांशुर्गौडो

लेखनसमयो दिनांकश्च - १२/१९ रात्रौ, ०७/११/२०१९, गाजियाबादस्थगृहे।

॥ २५. डॉ.योगेशकुमाराय पत्रम् (शोधदिनस्मारणम्) ॥

****

योगेश भ्रमणप्रियोऽसि गुरुभिर्ज्ञातः प्रसन्नोऽस्यपि
राजश्रीगुटिकाप्रचर्वणरतः चायप्रियो ज्योतिषी
शोधे रात्रिभवा च जागरणता ग्रन्थादिसंलोकनम्
भोपालस्थितभास्कराख्यभवने संस्थानके संस्कृते॥१॥

नानामित्रगणैस्सहापि कुरुषे स्म श्रौतचर्चार्चनम्
हास्योल्लासबहुप्रकाररसिकत्वं त्वं समादर्शयः
रात्रौ जागरणं दिने भ्रमणता भोजार्किटादिस्थले
मोटूहोटलचायपानमपि वा कृत्वा जरीहर्षितः ॥२॥

शोधानां प्रथया सदा बुधगणाश्छात्रा युवानस्तथा
प्राप्येमं सुखदं शुभं परिसरं शास्त्रीयमोदङ्गताः
त्वं ज्योतिष्यमहो निधाय हृदये कैर्न द्विजैर्मानितो
नानायाजकसत्यभावि-कथनैस्सम्मान्यभूषां गतः॥३॥

यद्यप्यच्छलभावशोभितमनास्त्वं वातुलो लक्ष्यसे
चाञ्चल्यासृतमानसं हि पुरुषो रोद्धुं क्षमो कोऽत्र वै
वृत्तिर्नैव जनैस्स्वभावजनिता सन्त्यज्यते कर्हिचित्
सत्यप्रेमपरः परापरसमस्सर्वत्र सौख्यं व्रजेत्॥४॥

शृङ्गेर्यां तव वासजन्यसुरभिं जिघ्रापयन् स्वस्मृतेः
मादृक्चित्तविरञ्जको बहुदिनैर्हास्याश्रितश्रावणैः
रात्रौ चायसुपानपाठनिरताः शोधार्थिनोऽनिद्रिताः

त्वत्कक्षेऽहमहो विभिन्नविषयैः कालं समाऽयापयम्।।५।।

तत्रस्थोत्कलसप्रकोष्ठवसतेर्नग्नस्य पार्श्वे शयः
अन्तर्वस्त्रविवर्जितस्य निशि वा स्वप्नादिगस्यापि च
लिङ्गोत्थानमहो विलोक्य गुरवे सर्वं समुक्तं त्वया
तेनाभद्रनिवासकाः सहजनाः सभ्यत्त्वमाशुर्गताः।।६।।

एवं कामिजनस्य चित्तविगतिं संरूपयन् वा क्वचित्
योषिद्व्रीङ्गितचेष्टितादिकथनं श्रीकामशास्त्राश्रयैः
कामिन्यश्च कथं वशे मम भवेदित्येतदाचिन्तयन्
त्वत्कक्षे विरहव्यथानिकथनैर्नूनं निशा यापिता।।७।।

त्वं शोधे निरतश्च लेखनपरः मध्ये च वार्तामुदा
कालः कस्त्विति बुद्धवान्न च मया निद्राऽपि लब्धा ततः
ब्राह्मे निद्रितपीडितोऽस्मि कथितं यद्वा चतुर्वादने
मैह्युय्याव पुनः पिबेव विपणौ चायं क्वचित् औष्ण्यदम् ।।८।।

श्रुत्त्वैतच्च हिमांशुरित्यहमहो चायप्रियो यश्च वै
योगेशेन सहापि तत्र गतवान् शीतानिलस्पर्शभाक्
आकाशे ध्रुवतारकं भवति तत्काले दिशादर्शकम्
स्वप्नेष्वारतभास्करालयजनाः आवां प्रयावो यदा।।९।।

पश्चाद् यत्र जरा प्रशान्तपथिके निर्माति चायं मुदा
अल्पास्तत्र भवन्ति पायिपुरुषा आवां यदा स्वागतौ
देह्युत्साहकरं च गोल्ड इति यत् ख्यातं सुचायं द्रुतं
किंचिद् विश्रमतं, नवं प्रतनवै युष्मत्कृते, तिष्ठतम्।।१०।।

देवीमन्दिरपार्श्ववर्तिविपणौ चायोच्चलच्चापणम्[25]
तत्रैव श्रमिका: पिबन्ति परितश्चोष्णोदकं श्रान्तिगा:
अश्वत्थस्थसुवेदिकां च परितस्तिष्ठन्ति सर्वे जना:
आवां तत्र विभिन्नचर्चनपराः, चायप्रतीक्षारता:।।११।।

तस्मात् पञ्चनिमेषकालगमिते चायस्य पाकेऽधुना
गृह्णीतं च विशिष्टमादकमिदं गोल्डाख्यचायं जनौ!
आदृत्यापि भवान् हिमांशुपदराड्! आस्वादयेद् आदित:
इत्युक्त्वा मम मानवृद्धिकरणाद् योगेश! नेत्राग्रग:।।१२।।

यातानीव दिनानि शीघ्रगतिभिर्वर्षत्रयस्यात्र वै
अद्यापीव तुदेत् सुखस्मृतिरहो विद्युच्चले जीवने
शोधच्छात्रतया त्वया च मयका कालश्शुभैर्यापित:
सङ्गीतादिकसक्तकाव्यरसिकैश्श्रीशैलजापूजया[26]।।१३।।

दीक्षान्तो भवतीह चाद्य मुदितोऽस्मीव व्यथापानकृत्
अद्याप्यस्मि विचिन्तितार्थपरिभिन्नो वापि खिन्नोऽथवा
सर्वं नाश्नुत ऐहिकं शिवकृपाहीनो जगत्सक्तिमान्
सर्वं शम्भुदयाश्रितं त्विति धिया तं निश्चितं संश्रयेत् ।।१४।।

लेखनसमयो दिनाङ्कश्च - ११:४५ रात्रौ, २२/०८/२०१९
गाजियाबादस्थगृहे।

---

25 उत्कृष्टं चलदिति उच्चलद् (आपणमित्यस्य विशेषणम्) चायस्य (चायसम्बन्धि) उच्चचलदिति चायोच्चलत् च आपणम् इति। (चाय का ठेला इति हिन्दी)

26 अस्माभिः सङ्गीतादिकसक्तैः काव्यरसिकैश्च, श्रीशैलजायाः पूजया अपि स्वकः कालो व्यतीतः।

॥ २६. डॉ.अरविन्दतिवारिणे पत्रम् ॥

****

श्रीमन् ! भो कविताविलासनिरत! प्रज्ञायुतैरावृत!
दृष्ट्वा वै भवतो पुनर्बहुविधं काव्यं समारञ्जितं
नानामोदसमन्वितं बहुजनैस्सम्मानितं सद्रसं
कीर्तिर्यात्वथ दिक्षु चेति मतिमन् गौडो वदामीह ते ।।१।।

ज्ञात्त्वा बागपते जनिस्थलमहो ते वा बड़ौतस्थले
भूयश्चापि निवेदयामि भवते तन्मेऽस्ति मातुर्गृहं
पूर्वं मे मयराष्ट्रको जनपदो ज्ञातो जनैः पूर्वजैः
पश्चाद्राजपदप्रतिष्ठितजनैर्हो गाजियाबादक:।।२।।

अद्याप्यस्ति निवास एव मम वाऽहो गाजियाबादके
ग्रामं स्वं परिहाय मत्कुलमिदं चायातवानत्र वा
अस्मज्जन्मसुभूस्तु काव्यनिरत! गङ्गातटस्थे पुरे
बोध्या बुद्धजनैर्बहादुरगढे शोभान्विते सद्वृते।।३।।

पुराणेष्वाख्यातं नगरमिदमेवं सुकृतदं
पुरा युद्धान्ते मोक्षकरणविधौ पाण्डवजना:
इहाऽऽगत्यैवाशु: रणमृतनृणां श्राद्धकरणा:
तत: ख्यातं लोकेऽपि बत गढ़मुक्तेश्वर इति ।।४।।

नाहं यामि कवित्त्वमेलनविधिं नो वा क्वचित् वाङ्मये
शब्दार्थप्रतिचोदनैकविषये व्याकृत्तिशास्त्रार्थके
नाहं काव्यनिदर्शनेषु कुशलो नाहं प्रयाम्यर्थवाग्-
रङ्गोल्लाससृतेऽपि मञ्चनविधौ स्वीये गृहे मोदित: ।।५।।

शोधं स्वारनिबन्धनं पदगतं श्रुत्याश्रितं तत्र वा
भोपाले कृतवान्पुरा परिसरे संस्थानके संस्कृते
तत्रानेककवित्त्वभासितजना संरञ्जयन्तीव वा
चेतांसि प्रियतां प्रयान्ति पुरुषा: तत्रस्थलोकस्य ते।।६।।

पत्राणां परिलेखनेऽस्मि निरतो विद्वज्जनेभ्योऽप्यहं
सर्वेभ्यो न, मनो दिशेद्यदि दिशां तस्मै , स्वकोद्भावनै:
नानाचर्चनतत्परोऽपि तदहो भूत्त्वा रमे वाक्तपश्-
चर्यं तच्च नृणां शिवप्रदमिति ज्ञात्त्वा जहातीव क:।।७।।

भावश्रीरिति पुस्तकं मम हि यत् पत्राश्रिता वल्लरी
तत्रैवं सकलं निधत्तमिह भोः, काव्यात्मकस्सङ्ग्रह:
पत्रे भावनिदर्शनैरिव च मे श्रीस्सा समुद्भासते
तस्मात्पुस्तकनाम मेऽस्ति मतिमन् भावार्थविज्ञापकम् ।।८।।

हिमांशुभालभक्तोऽसौ हिमांशुप्रीतिमाँश्च य:।
गौडस्सोऽत्र लिखेत्पत्रं चाऽरविन्दतिवारिणे ।।९।।
काव्यं कृत्त्वा कविर्भाति श्रावयित्त्वा यशो व्रजेत्।
कव्यं जग्ध्वा च पितरो ददत्यर्थं सदेप्सितम् ।।१०।।

प्रेषको हिमांशुर्गौडो
लेखनसमयो दिनाङ्कश्च - ११:३८ पूर्वाह्णे, चायपानानन्तरम्, १८/०९/२०१९
स्थानम् - गाजियाबादस्थगृहे ।

॥ २७. श्रीमच्चान्दकिरणसलूजाभ्यः पत्रम् ॥

****

श्रीसंस्कृतैकपरिनिष्ठितशुभ्ररूप!
भाषाविभेदसकलार्थविवेतृरूप !
संवर्धनाग्रसरणस्सुरवाच एवं
जीवेच्छतं भुवि भवान् भवते नतोऽस्मि ॥१॥

भाषागतं बहुविधं च निगूढतत्त्वं
चार्थान् विवक्ति विविधप्रतिसक्तभावान् ।
इत्थं झटित्यवगमप्रदवाक्सुरम्यो
यस्संवदेत्तमिह वा बुधमानतोऽस्मि ॥२॥

कार्यालयेऽपि भवतां कृतवाँश्च नाना-
कार्याणि देववचनानि निदर्शकानि ।
श्रीमन्! स्वजन्मभुवि चाद्य समागतोऽस्मि
वर्षाभिरद्य मुहुरेव च नन्दितोऽस्मि ॥३॥

नो नागरैश्च सुलभं प्रकृतेस्सुचित्रं
रम्यं दिनादिमिहिरस्य सुदर्शनञ्च ।
क्षेत्राणि वृक्षसुखदानि हरित्तमानि
ग्रीष्मेऽपि शीतलमरुन्नगरे न लभ्यम् ॥४॥

अश्वत्थमूलपरिसंस्थितिरस्ति मोद्या

छायासुखश्च सुमनाः शिवचिन्तनैर्वा ।
नानासुमित्रगणसंवृतहास्यवार्ता-
मोदं क्व वा प्रलभते परिधावमानः ।।५।।

दिल्ल्यां प्रदूषणमहो जलवायुखेषु
तस्मान्न वा प्रवसतीह कविस्सुखैषुः ।
किं वा धनेन सकलं प्रकृतिश्रितं च
श्रीकं कदापि पुरुषः परिलब्धुमर्हः ।।६।।

त्वग्रोमकूपसुखकृन्मरुतां प्रवाहस्-
संस्पर्शहर्षितजनो गणयेत्क्व वित्तम् ।
मेघाकुलं च नभसः परिदृश्यमेतत्
पर्युत्सुकीप्रकुरुते नहि काँश्च जन्तून् ।।७।।

वाञ्छामि च प्रकृतिहर्षकृते सुरम्ये
ग्रामे क्वचिन्नरवरैश्शिवभक्तियुक्ते ।
गङ्गातटेऽपि भवतान्मम चेन्निवासो
धन्यस्स्वजीवनदिनानि वियातुमीहे ।।८।।

चान्द्रीकला वितरतीह सुधां निशासु
तारागणैर्नभसि चित्रकृतं सुरम्यम् ।
तादृक्सुखप्रदसुदृश्यमहोऽत्र लभ्यं
ग्राम्यं न कैस्सहृदयैरपि हातुमिष्टम् ।।९।।

श्रीराममन्दिरमिहास्ति जनैकलभ्यं
श्रीकारिवारिशिवलिङ्गमथ[27] प्रभाति ।
नानासुरार्चनरताः वणिजश्च विप्राः
देवालये दिनमुखे परिदृश्यमाणाः ।।१०।।

नो ग्रामवच्च सकलं सुविधाविहीनं
चिन्त्यं तथाऽर्धनगरं त्विव तच्च भाति ।
विद्युज्जलान्यपि फलानि धनालयश्चा-
ऽप्यन्नानि शाकविभवोऽत्र सदा सुलभ्यः ।।११।।

सप्तप्रजातय इह प्रतिभान्ति हिन्दो-
रर्धार्धमेव परितो यवनैर्वृतश्च ।
सौहार्दसंविलसिताः हि मिथो वसन्ति
तस्माद् बहादुरगढः परिशोभमानः ।।१२।।

यद्यप्यहं तु परिहाय कुटुम्बिजानैस्-
साकं बहादुरगढं निजजन्मभूमिम् ।
आयातवाँश्च नगरं नरकं विभातं,
श्वासोऽपि यत्र सुलभो न भवेद्विशुद्धः ।।१३।।

वर्षत्रयैर्मम जनाः प्रवसन्ति चात्र

27 श्रियं कर्तुं तच्छीलं तादृशं वारि, तेन युक्तं शिवलिङ्गम् । स्पष्टीकरोति - अर्थात् यत्र शिवलिङ्गे समर्पितं जलमपि श्रीप्रदायि समृद्धिकारि भवति ।

मद्भ्रातरौ प्रकुरुतोऽत्र धनाप्तिवृत्तिम् ।
माता गृहस्थकुशला च पिता प्रमोदः
पाठे कनिष्ठभगिनी निरताऽधुनाऽस्ति ।।१४।।

किन्त्वत्र मे न रमते मनसां मयूरो
ग्राम्ये रमेत परिनृत्यति मेघलोकैः ।
अम्बूज्झरीव झरति श्रुतिभाववारां
वायुप्रवाह इव शैवविचारकल्पः ।।१५।।

किं वा वदानि मतिमन्! वयमप्यहानि
श्रौतादितत्परदिशासु निवाह्यमानाः ।
शास्त्रैकपद्धतियुताः गुरुतां प्रवर्धि-
लोकं विवृद्धिमनसा बत जीवमानाः ।।१६।।

संवर्णयामि मतिमन्नपि नैकचित्रा-
ण्यानन्ददान्यथ जलानि सुतृप्तिदानि ।
तत्रत्यदृश्यघटनापरिरञ्जितानि
येन व्रजेदपि भवान्सुखलब्धपद्यम् ।।१७।।

श्वानो भ्रमन्ति परितोऽपि गृहाणि चान्नं
जग्धुं शनैश्चरदिनेषु च कृष्णवर्णाः ।
ये वै शनिग्रहनिपीडितमानसाश्च
शान्तिं विनैव जपनादथ वाऽऽप्नुवन्ति ।।१८।।

काकास्तथैव पितृरूपसमुक्तदर्शाः
खादन्ति ते प्रतिदिनं क्वचिदन्नपिण्डम् ।
तेनैव ये च पितृदोषयुताः मनुष्याः
सन्तानसौख्यमपि ते च ततः प्रयान्ति ।।१९।।

सर्पाः पिबन्ति च पयांसि शिवालयेऽत्र
प्रायेण नागतिथिकाः शुभपञ्चमीषु ।
चेत्कालसर्पपरिपीडितभाग्ययुक्तास्-
तेन प्रयान्ति सुखतां च विनैव यत्नैः ।।२०।।

गावोऽत्र चैव सदनेषु मुदा भवन्ति
नव्यैस्तृणैरिव सदोत्सवमाचरन्ति ।
ताभ्योऽन्नदानपरितत्परभक्तलोकाः
पुण्यं ह्यदृश्यबलतामपि यान्त्ययत्नात् ।।२१।।

तस्मादहं प्रतिभवामि विभिन्नकाले-
ऽष्वालोकितैकवपुषामिव सन्निकाशे ।
निर्वर्ण्यमेव सुखमत्र लभे प्रभां वा
विस्मर्तुमर्हति जनो नहि जन्मभूमिम् ।।२२।।

किं वा वदानि मतिमन्! निजचित्तकल्पां
सम्यग्भ्रमेन्मम मनो विविधार्थवत्सु ।
लोकेषु शैवपितृलोकनिदर्शनेषु

ताम्रेषु हेमनगरेष्वपि राजतेषु ।। २३।।

स्वाप्नेषु मध्यदिवसेषु निशासु सायङ्-
कालेष्वहो मम शरीरपृथक्सुतत्त्वम्[28] ।
अव्याहतेन गतिना परियाति याक्षे
गन्धर्वलोकपतितैस्स्वरभृत्तरङ्गः[29] ।।२४।।

प्रेषको हिमांशुगौडो

लेखनसमयो दिनाङ्कश्च – ८.३० रात्रौ , १७-०५-२०१९

स्थानम् – बहादुरगढस्थे गृहे ।

---

28 शरीरात् – स्थूलदेहात् पृथक् यत् सुतत्त्वम् अर्थात् मनश्शरीरेण याक्षे शैवे ताम्रे रजतनिर्मिते हेमभवननिर्मिते च नगरे स्वप्नमाध्यमेन याति । क्वचित् मध्याह्ने शेते सायङ्कालेऽपि क्वचित् निद्रितो भवेद्दैवात् तदा रात्रौ वा कदाचित् दृष्टविशिष्टस्वप्नो नानाश्चर्यजनकनगरीष्वपि भ्रमति मनश्शरीरेण अव्याहतगत्या इत्याशयः ।

29 गन्धर्वलोकपतितैः अर्थात् गायकैस्सह स्वरगानश्रवणेन भृताः तरङ्गाः यस्मिन् सः ।

||| २८. श्रीमद्राधावल्लभत्रिपाठिभ्यः पत्रम् |||

****

राधामाराधते बाधानाशिनीं यो बुधोऽधुना ।
तं राधावल्लभं वन्दे राधावल्लभसुप्रियम्।।१।।

हिमांशुभालप्रिय एष विप्रो हिमांशुगौडस्त्विति यो विधेयः।
हिमांशुरश्मिश्रितनव्यकाव्यं हिमांशुगुण्यस्तनुते हिमाभम्।।२।।

क्वचिच्छुभाशाभृतचित्तलोके सृजेच्छिवोद्भास इवार्थसारी।
नूनं विबुद्धैर्मुहुरित्यवोचि विद्याधनं नैव च भारकारि।।३।।

कुलपते! भवतां गुणगौरवं श्रुतिपरम्परया श्रुतवानहम्
शिवविचारधृताशिवजीवनाः परिविचार्य शुभानि सरन्त्यहो।।४।।

अहमीक्षेऽभिधं काव्यं भवताऽनूदितं च यत् ।
भोपालस्थे हि संस्थाने दृष्टवान् पुस्तकालये।।५।।

श्रीमन् ! शोधसरोऽहमत्र बहुधा वर्षत्रयैश्चायपः
मोटूहोटलसङ्गतिः स्वसुहृदा साकं नवीनेन च
श्रीसिद्धान्तसुकौमुदीस्वरगताध्यायस्य पुष्पास्वर-
ग्रन्थेनेह समं विधाय तुलना श्रीदाशहस्तेऽर्पिता ।।६।।
महोदयाऽत्र काव्यराजभोजसुप्रभावितो

निशासु चायपानकारणाद्विनिद्रितोऽप्यहम्
अनेककाव्यकल्पनारतोऽभवं मुदा स्वतो-
ऽप्यहो शिवैः कृता कृपा शुभं फलं ददाति नः ।।७।।

पुराऽपि पत्रलेखने रुचिर्मुहुश्च जागृता
न रोद्धुमर्हति क्वचिज्जनोऽप्युदीयमानभाम्
यथा तमांसि सूर्यराट् निहन्ति वै निराशतां
तथैव हृज्जदुःखमेव काव्यभाः विनश्यति ।।८।।

युवत्त्वेऽपि ये भोगहीनाः भवन्ति
मनोभिस्सदा कामुकत्त्वं चरन्ति
तदा पुण्यहीनत्त्वमेवास्ति तेषां
तथा सोऽपि विद्वान् धनैर्यो वियुक्तः।।९।।

कीर्तिवित्तैषुणो नैव नार्यैषुणश्
चिन्तयन्तश्शिवं ये विरागाः बुधाः
नो बुधेष्वेव ये विज्ञताख्यापकास्-
तेऽधुना कुत्र सन्तीति न ज्ञायते।।१०।।

हे बुध ! श्रीजलक्षालिते सत्तटे
तन्नरौरापुरस्थेऽस्ति विद्वत्पुरो
मद्गुरुस्तत्र यस्सर्वपूज्यो महान्

सर्वशास्त्रप्रवक्ता च वैराग्यवान्।।११।।

षड्दर्शनान्यपि च शब्दगतैकशास्त्रं
साहित्यतत्त्वमपि वक्ति पुराणवेत्ता
धर्मैकजीवितशिवो द्विजपालनश्श्री-
बाबागुरुस्त्विवति पदाख्यगुरुं नमामः।।१२।।

व्याख्यानानि बहून्येवं श्रुतानि त्वन्मुखादहम् ।
अत्यन्तगूढतत्त्वानि प्राप्तानीह मया तदा ।।१३।।
साहित्यमोक्षदायित्वं कथं चेति विवेचने ।
भवद्वैदुष्यमालोक्य प्रशंसापरको न कः ।।१४।।

जानेऽहं भवता प्रायः कार्गदं न प्रयुज्यते ।
लेखनाय तु तत्कालं सङ्गणकेन टङ्क्यते ।।१५।।
एतच्चापि निशम्याऽहं प्रायष्टङ्कणसुप्रियः ।
जातोऽस्मि तेन वृक्षाणां कर्तनं न्यूनतां गतम् ।।१६।।

संस्कृतार्थाश्च सच्छात्राः जायेरन् प्रविधिप्रियाः ।
सुरवाक्तेन नूनं च प्रसृता स्याद्दिगन्तके।।१७।।
मङ्गलस्याऽद्य रात्रौ यो ग्रामं स्वीयं समागतः ।
हिमांशुं लोकयन् पत्रं हिमांशुर्लिखतीह वै।।१८।।

समृद्धाऽद्य भवेत्सेयं पत्राणां सुपरम्परा ।

सौहार्दं चैव सद्भाव: प्रसरेत्तेन बोद्धृषु ।।१९।।
विद्वद्वृद्धं नमस्कृत्य भोजनाय सुसज्जित:।
विरमाम्यत्र लेखाद्वा शिवं शम्भुर्ददातु न: ।।२०।।

प्रेषको हिमांशुर्गौडो
लेखनसमयो दिनाङ्कश्च- १०.१५ रात्रौ , २१-०५-२०१९ , चायपानानन्तरम्।
स्थानम्- बहादुरगढस्थे गृहे ।

||| २९. श्रीमद्वाचस्पतिमिश्रेभ्यः पत्रम् |||

****

वाचस्पते! कुलपते! बुध! मिश्रवर्य!
नूनं समस्तजनतासुखदायितत्त्वं
धृत्वा चरेदथ भवानपि संस्कृतश्री-
संवर्धनाग्रसरणो गणमान्य! भाति।।१।।

श्रीमन्! हिमांशुरिति यो लिखतीह पत्रं
सोऽस्मत्पुराणपुरुषैर्द्युतिलब्धमोदो
गौडो गिरैकशरणो गिरिजापतिं च
स्मृत्त्वा, समस्तसुखतामिव याति सद्यः।।२।।

श्रीसंस्कृतोल्लसितवाक्स्त्रवितामृतानि
पातुं, समुत्सुकजनो भ्रमतीह चित्तैर्-
दृष्ट्वा हि कश्चिदतिशिष्टविशिष्टभाव-
पुष्पं, द्विरेफ इव वा हृदि हृष्टरूपः।।३।।

कुत्र भ्रमानि मुहुरेव किमुत्सृजानि
किं शब्दरूप इव वा करवाणि वायौ
भ्रान्तोऽप्यदृश्य इव वा मनसां विरूपैः
संलोकते क्वचिदनाप्तसुवर्णलोकान्।।४।।

कस्मै निवेदयतु वा हृदि जातभावान्
कं ध्येयमत्र पुरुषोऽपि यथार्थयेद्वा
वार्तामनेककुसुमोच्चयभूगतां क:
रम्यां पिबेदथ सुधामिति निश्चित: कै:।।५।।

उत्तरे सुप्रदेशेऽस्मिन् संस्कृतोद्धारकारणै:।
प्रचाराचारसंचारा: भ्रमन्ति भवतां जना:।।६।।
कुत्रचित्पाठनं कुर्याच्छोभायात्रा क्वचिच्चरेत्।
पठेयुस्संस्कृतं सर्वे ध्येय इत्येव नापर:।।७।।

गृहे गृहे गिरा दैवी स्याल्लक्ष्यं हृदि संधरेत्।
सर्वदा संस्कृतेनैव भाष्यतां हास्यतां जनै:।।८।।
कुत्रचिच्चायचर्चा स्यात्क्वचित्संस्कृतमेलनम्।
कवितागायनं चैव प्रतियोगित्त्वकारणम्।।९।।

बालेषु छात्रसङ्घेषु प्रचारोऽस्य विधीयताम्।
तेनैव संस्कृतोत्कर्षश्चित्ते चैतन्निधीयताम्।।१०।
श्रीमन् ! यूट्यूबमार्गेण शिक्षा संस्कृतसारिणी।
द्रुतं सौष्ठवमापन्ना संसारे सुलभा भवेत्।।११।।

मयापि स्वीयकाव्यानि संस्कृतच्छन्दसां चयै:।
दृश्यश्रव्यस्वरूपेण स्थापितानि यथा तथा।।१२।।
कार्यार्थं गतवान् प्रयागनगरे कुम्भोत्सवे श्रीजले

स्नातुं, तत्र विराजितो शतमखैर्युक्तो महामण्डपः
यत्र श्रीकरपात्रयत्यभिसृतं धर्मादिसम्भाषणं
जातं, त्र्यम्बकचेतनेश्वरयतेस्तत्रैव होराद्वयम्।।१३।।

स्थित्त्वा दर्शनमालभीति भवतो शिष्यैर्वृतस्याऽध्वरे
देवीवाक्चरणो भवानिति ततो ज्ञात्त्वा जनैर्निर्गतः
स्थानं स्वं , क्व चरेद्विजोऽपि झटिति श्रौतार्थदं सत्फलम्
ये चाद्यापि कलौ सुरार्चनरताः धन्याः हि ते सज्जनाः।।१४।।

अधुना परिवारेषु प्रेममात्रं न दृश्यते।
धनार्थं धावमानाश्च यन्त्रवद्भ्रान्ति मानवाः।।१५।।
सोदरौ च मिथश्शत्रू जातौ सम्पत्तिकारणैः।
माता पिताऽधुना पुत्रैर्गण्येते नहि कुत्रचित्।।१६।।

गुरुशिष्यसुसम्बन्धो नष्टो, मैत्री परस्परम्।
वित्तमाश्रित्य जायन्ते विवाहाः, न गुणाश्रिताः।।१७।।
विप्रकन्यापि शूद्रेण पित्रा नूनं विवाहिता।
सर्वकारीयवृत्तिश्चेत् जातिश्चापि न लोक्यते।।१८।।

सुशीलोऽपि युवा विद्वान् सुन्दरश्च गुणान्वितः।
अनूढस्सीदतीवाद्य अल्पवित्तश्च चेद्भवेत्।।१९।।

अश्वत्थाश्च तथैवाम्रा: निम्बा: नष्टा पुरेष्वपि ।
सर्वत्र मृत्युदं वायौ वाहनाद्यै: प्रदूषणम्।।२०।।

भूजलस्तरहानिश्च तापमानाभिवर्धनम् ।
हिमखण्डा: गलन्तीव नद्यो नश्यन्ति भारते।।२१।।
महिष्यश्चाप्यजा: गावो विलुप्ता: नगरेषु हा ।
ग्रामेष्वेता: न सर्वत्र, लोक्यन्ते चैव कुत्रचित् ।।२२।।

दुग्धं घृतं न तक्रं वा कुत्रापि लभ्यते मधु ।
लुप्तप्राया: प्रजायन्ते भैषजानि वनस्पति:।।२३।।
मच्चित्ते हि महाचिन्ता प्रादुर्भूता विलोक्य तत् ।
कथं जीवनमद्धा हा प्राणिनां स्यात्सुरक्षितम् ।।२४।।

कृषियोग्यासु भूस्वद्य भवनानि महान्ति च ।
निर्मीयन्ते गृहाण्येवं कृषिहानिर्भवेत्तत: ।।२५।।
जनसङ्ख्याप्रवृद्ध्या वा फलान्यन्नान्यपांसि हा।
नश्यन्ति द्रुतवेगेन कोऽप्यत्र चिन्तितो नहि।।२६।।

विकासो वा विनाशो वा किं वदानीह तद् वयम् ।
लाभा: न्यूना: हि विज्ञानैर्विनाशस्सर्वतोऽधिक: ।।२७।।
प्रकृतिं यो विनश्येच्चेत् तं प्रकृतिर्विनश्यति ।
अज्ञात्वा नियमं चेमं विज्ञानी नाशतत्पर: ।।२८।।

गङ्गा गोदावरी नष्टा कालिन्दी च सरस्वती ।
धर्मकर्माणि नष्टानि जनानां हृदयानि च ।।२९।।

उद्घाटनाय मनसि प्रभवेद्विचार:
सच्छात्रभृद्गुरुकुलं प्रकृतिश्रितं च
वृक्षादिरोपणरता: जलरक्षिणश्च
स्युर्यत्र गोप्रियजनाश्शिवशास्त्रमग्ना: ।।३०।।

मित्रैरपीह बहुधाऽथ समर्थितोऽस्मि
अध्यापनादिगतिभि: परिहर्षितोऽस्मि
संरक्षणाय बहवो सुहृदो नियुक्ता:
वित्तैकवाप्तिरिव वाऽल्पतमत्त्वमेति ।।३१।।

वाञ्छामि चैव मतिमन् सुरवाग्भिरेवं
सम्भाषणेषु कुशला: प्रकृतेस्सुरक्षां
कुर्युस्तथा विषयमेवमधीत्य शोधै:
ग्रामेषु चापि नगरेषु निबोधयेयु: ।।३२।।

यद्राजनीतिगतमेव विशिष्टतथ्यं
किं सर्वकारकृतलोकहितं सुकार्यं
राष्ट्रेऽधुना भवति किं त्विह जाग्रताश्च
स्युस्संस्कृतेन गिरया जनबोधकास्ते।।३३।।

इत्त्थं ममास्ति सुरवाक्शरण! प्रसाद्यश्-
श्रीकप्रदार्थ इव कश्चिदहो प्रमोद्यो
नानूतनोऽपि विषयः प्रकृतिप्रियश्च
यश्चाद्य पत्रदिशया विनिवेदितस्ते।।३४।।

हारित्यमेव परिकल्पयितुं प्रयत्नः
पत्रैश्च संस्कृतसरैस्सरति द्विजोऽसौ
भावश्रियं च विदधामि बुधेभ्य एवं
काव्यादिमार्गपथिको लभतां शिवश्री:।।३५।।

प्रेषको हिमांशुगौंडो

लेखनसमयो दिनांकश्च - ११:०५, गुरुवासर:,२२-०५-२०१९

चायपानानन्तरम्।

स्थानम् - गाजियाबादस्थे गृहे।

॥ ३०. प्रो. श्रीनिवासवरखेड़ि-महोदयाय पत्रम् ॥

****

भोश्श्रीनिवास! बुधराट्सदसि प्रसिद्ध!
भो कालिदाससुरवाक्सदनैकमुख्य!
शास्त्रालये कुलपतेः पदवीप्रतिष्ठ!
भो काव्यपाठरसप श्रुतितत्त्वनिष्ठ!!१!!

श्रीरामटेक इति नागपुरस्थले च
वर्तेत शास्त्रनिलयो बहुविज्ञयुक्तः
तस्यैव वा कुलगुरुत्वगताय तुभ्यं
सद्वाग्रताय सलिलानि नवाक्षराणि ।।२।।

पत्रं स्वभावपरकं नवरम्यशब्दैर्-
यो गुम्फतीह मतिमन् स च वै हिमांशुर्-
गौडो गिरां सरसि गाढविरागरक्तश्-
श्रीशारदापदसरोजसुगन्धसक्तः ।।३।।

यो बोद्धृहार्दपरिदर्शनमोदनार्थी यो
शोद्धृभावनवदिक्परिचोदनार्थी
धर्माहवाय सततं परिबोधनार्थी
भावाढ्यपत्रमधुनास्ति विलेखनार्थी ।।४।।

विद्वन् ! वहन्ति परितो मधुवारिधाराः

लोकस्तथापि तृषित: किमिदं विचित्रं
कर्माप्यसत्फलमिति प्रवदन्ति सन्तः
किन्त्वद्य कर्मनिपुणा अपि शोकदग्धाः ।।५।।

आडम्बरं नहि दधामि गतस्सभायां
जानन्ति मां न बहुधा कवयो बुधाश्च
तस्मान्न तेऽपि परिहर्षितभावनाभिः
एह्यादरान्न च वदन्ति सुखै: हिमांशो !!६!!

हाऽद्य प्रवक्तृपदलब्धजनो बुधत्त्वम्
आरोपयेद्यदि भवेन्नितरां स मूढ:
वित्तादिहीनविबुधावमतं चरेच्च
न प्रातिभं विगणयेद् विदुषां समौघे।।७।।

अन्यद् वदामि मतिमन् विबुधद्विषां वा
शब्दादिशास्त्रपरिलग्ननृणां मनस्स्थं
नागेशशास्त्रकुशलाः बहुपङ्क्तिवाचो
युञ्जन्ति लौकिकपथे नहि शब्दशास्त्रम्।।८।।

शब्दप्रसाधनरता: बत शाब्दिका: ये
सूत्रैश्च पाणिनिकृतैर्घटयन्ति चित्ते
काव्यादितत्त्वपरिभाषणशून्यचित्ता:
अर्थान् विदन्ति न च मूलतया श्रुतीनाम्।।९।।

मन्ये न तं प्रथमत: पदशास्त्रविज्ञं
योऽर्थादितत्त्वरहितस्स कथं पदज्ञो
य: काव्यपाठरसशीलनतत्परश्च
वेदार्थनिश्चयपरस्स हि शब्दशास्त्री।।१०।।

दु:खानि जीवनगतानि तुदन्ति जीवान्
वित्तानवाप्तिरिह चैकविमुख्यलक्ष्या
धावन्ति लब्धुमधिकानि धनानि सर्वे
मार्गं च कश्चिदपि वा गणयन्ति केऽपि।।११।।

विद्वन्! स्वराश्रित उताऽस्ति मदीयशोधो
भोपालके परिसरे हि समर्पितं यत्
ग्रन्थद्वयस्य तुलना स्वरशास्त्ररीत्या
शब्दैकपक्षगतिभिश्श्रितवान् मुदाहम्।।१२।।

यो ज्योतिषेऽस्ति निपुणो हृदयेन साधु:
चायप्रियो मम सुहृद् भवतां सकाशे
योगेश इत्यभिहितो, भवते सुपत्रं
तेन प्रचोदितधियैव लिखामि चाद्य।।१३।।

रागोऽस्ति काव्यकरणे नवचिन्तनस्य
शब्दप्रसाधनपरा च मदीयबुद्धि:
श्रौते पुराणकथनेषु लभे प्रमोदं

विद्वन् ! सदा शुभहृदा तरुमूलमीहे।।१४।।

यत् प्रातिभं प्रभवति श्रुतितत्त्ववित्सु
काव्यप्रभाहृदयदेशविभासितेषु
मूढेषु तत्कथमहो भवताज्जनेषु
विज्ञाभिमानपरिधृत्सु कुशाब्दिकेषु।।१५।।

सौहार्द्रपूर्णमनसः क्व बुधाः निदृष्टाः
विद्वेषणेषु कुशलाश्च पराँस्तुदन्ति
स्यात्सौमनस्यमधुना विबुधेषु चैतत्
सञ्चिन्त्य चात्ममनसा विदधामि यत्नम्।।१६।।

श्रीमन् प्रणम्य विरमामि निजाच्च लेखात्
धाराः विचारसरितां प्रवहन्ति भूयः
श्रीशारदापदरतोऽपि भवेत्स्वहीनो
सौख्यात्मवान् शिवमयं ह्यनुभूयमानः।।१७।।

प्रेषको हिमांशुगौडो
लेखनसमयो दिनांकश्च – १०-३० पूर्वाह्णे , ३०-०५-२०१९
स्थानम्- गाजियाबादस्थे गृहे।

||| ३१. पद्मश्रीरमाकान्तशुक्लेभ्यः पत्रम् |||

****

काव्यकान्तं नुमस्सत्सु भान्तं नुमो भारतीभाविधानप्रधानं नुमः
राजधानीनिवासं प्रमोदं सतां श्रीरमाकान्तशुक्लं नुमश्श्रद्धया।।१।।

यो हिमांशुश्च गौडोऽधुना वर्तते गाजियाबाददेशे वसेत् सोऽत्र वै
पत्रलेखैस्स्वमोदं समामन्यते काव्यपन्थानमाश्रित्य सञ्जीवति।।२।।

भाति मे भारतं चेति भक्तिश्रितं
देशभावैर्भृतं गौरवावर्धकं
सुप्रसिद्धं सुकाव्यं भवद्भिः कृतम्
नैकवारं श्रुतं तन्मया त्वन्मुखात्।।३।।

शोधकाले यदाऽहं मुदा चाऽवसं
राष्ट्रिये संस्कृते विप्र ! संस्थानके
तत्र भोपालदेशे मुहुः काव्यकृत् !
काव्यसम्मेलने दृष्टवाँस्त्वामहो।।४।।

'भाति मे भारतं', 'भाति ते भारतं'
चेति काव्यद्वयं दृष्टवाँश्चाऽप्यहम्
'भाति नो भारतं' चेति वै लेखने
जाग्रता मद्रुचिर्भावविख्यापिनी।।५।।

देववाण्या च ये जीवमाना: जनास्तेषु चादर्शरूपो भवान् मन्यते
त्वां समाश्रित्य शोधाश्च जाता: पुनः काव्ययूनां कृते प्रेरणादायक:
।।६।।
संस्थापिता हि भवता परिषच्च दिल्ल्यां
काव्यप्रकाशनकरी द्विज देववाण्या:
स्यात्सा कविप्रभृतिलोकशिवप्रदेति
सत्कामनाभिरिह धन्यवचो ब्रवीमि ।।७।।

सर्वे वदन्ति बाबा, वार्धक ! नमो नमस्ते
इत्येतदस्ति काव्यं , भवतां मुखाच्छ्रुतं यत्
व्याख्यानकारिशैली , मध्ये प्रयुज्यते या
हर्षन्ति के न तस्या:, विद्वन् ! नमो नमस्ते ।।८।।

मेट्रोयानं समाश्रित्य कविता भवदास्यत:।
श्रुता मोदम्भृता नूनं भोपाले कविमेलने ।।९।।
विद्वन्! नरवरे चाहं नरौरानगरस्थले।
श्रीमद्बाबागुरोरास्याच्छब्दशास्त्रमधीतवान् ।।१०।।

मध्ये मध्ये च काव्यानि माघादीन्यपि दृष्टवान् ।
तस्माद्रुचिर्मदीयापि जाता शब्दनिगुम्फने ।।११।।
न कदापि नरो काव्यं कुर्याद् यत्नशतैरपि।
स्वाभाविकी तु या धारा कैश्चिन्नैव निरुध्यते।।१२।।
भावत्कं हि वपुर्यश्च शुक्लवस्त्रसुवेष्टितम् ।

सरस्वतीप्रसादस्स्याल्लक्ष्यते हृत्प्रमोदकृत् ।।१३।।
कविवृद्ध! नमस्तुभ्यं विरमाम्यद्य लेखनात् ।
भवतः कविता नव्या काऽस्ति मां सूचयेद्भवान्।।१४।।

भोजनं च विलम्बेन चायपानस्य कारणात्।
रात्रौ वाऽपि दिने चापि करोमि स्वेच्छया सदा ।।१५।।
सप्तवादनकाले चेच्चायं पीतं मया तदा ।
दशवादनकाले स्याद् भोजनं चेति मच्छ्रितिः ।।१६।।

न जानेऽयं कदा रागः पत्रलेखनरूपकः ।
जागृतोऽस्मन्मनस्येवं धारा कैः रुध्यते जनैः ।।१७।।
कदाचिद् गाजियाबादे भवतामागमश्च चेत् ।
भोजनं चायपानं च कर्तव्यं मद्गृहे तदा ।।१८।।

भोजनस्यास्ति कालो मे हठाल्लेखं निरुध्य वै ।
काव्यकारं नमस्कृत्य चास्त्वलं स्याच्छुभा निशा ।।१९।।

प्रेषको हिमांशुर्गौडो
लेखनसमयो दिनाङ्कश्च - १०:१८ रात्रौ, ०४-०६-२०१९
स्थानम् – गाजियाबादस्थगृहे ।

।।। ३२. आचार्यश्रीदिवाकरवशिष्ठेभ्यः पत्रम् ।।।

****

श्रीमद्दिवाकरवशिष्ठगुरो! शृणोतु
चित्तेऽद्य मे समुदिता नवभावना या
विद्वन् गृहेऽस्मि भवतां स्तवगायनानां
चर्चां करोमि निजपार्श्वगतैस्सहाऽहम्।।१।।

तं पार्वतीस्तवमहो भवतां मुखाच्चेत्
शृण्वन्नरो नवनवत्त्वमियाच्च हर्षम्
तस्मात् समुत्सुकजनः परिमोदते वै
धन्यत्वमेति जनता सुरभक्तिगीर्भिः।।२।।

ध्वन्यङ्कनं यदि भवेद्भवतां सुवाचो
दूरस्थभक्तपुरुषा अपि वै कृतार्थाः
स्युर्येन शम्भुभजनेष्वभिरक्तचित्ता
उत्साहमेति पुरुषो न हि कस्त्वदर्थैः।।३।।

अद्यैव मे मनसि भावनिजागृतिर्या
तां स्वाग्रजं त्वतुलगौडमवोचि सद्यो
निर्बोध्य चाऽप्यभिमतं धृतवानिदानीं
ध्वन्यङ्कनं भवतु वै भवतां सुवाण्याः ।।४।।

श्रीश्रावणीति भवति द्विजपूज्यपर्व

 ISBN - 978-81-943558-2-3

शास्त्रोत्सवं सुपुरुषाश्च समाचरन्ति
यज्ञोपवीतपरिवर्तनमद्य मन्त्रैः
कुर्वन्ति कल्मषहरं मिहिरार्चनं च ।।५।।

तेजोभृतां तपति यस्तपसां वरिष्ठः
सूर्योऽशुमान्कमलपश्च मरीचिमाली
तस्यार्चनं हि शतशो शुभलोककामाः
कुर्वन्ति वै नरवरे श्रुतिमन्त्रपूताः ।।६।।

भस्मस्नानं मृदास्नानं गोमयस्नानमेव वा।
पञ्चामृतेन सुस्नानं चरन्तो जाह्नवीजलैः।।७।।
बहून्याचमनान्येवं विनियोगाः पुनः पुनः ।
सङ्कल्पाश्चैव मन्त्राश्च चरन्तो जाह्नवीतटे ।।८।।

कौपीनधारिपुरुषा इह कर्मकाण्डं
नानासुपद्धतिसमुक्तमथाचरन्ति
व्याख्यां करोत्यथ भवान् सुनिदर्शनानि
निर्दिष्टकर्मपुरुषाश्च चरन्ति चर्याम् ।।९।।

होऽहो सदा नरवरो हरभक्तिमग्नो
धर्मैकनिष्ठपुरुषैः परिसंवृतश्च
श्रीमत्पतञ्जलिपदार्थकरं सुभाष्यं
धृत्त्वा द्विजास्स्वहृदये विचरन्ति चेह ।।१०।।

बाबागुरुं च सकला: विबुधा: प्रणम्य
शास्त्राणि नव्यदिशया मुदिता वदन्ति
श्रीमद्दिवाकरवशिष्ठगुरो ! भवाँश्च
नूनं तथा नरवरे प्रचरेच्च धर्मम् ।।११।।

तं ब्राह्मणं शतपथं स्वविशिष्टशैल्या
चाऽऽकाशमण्डलमपि पृथिवीं पुनश्च
गुञ्जायमान इव सिंहगिराऽभिगायन्
धर्मायमान इव लोकमुताऽऽचरेच्च ।।१२।।

सङ्कल्पा विधिपूर्वकाश्च निखिला: कर्मात्तिमुख्यास्तथा
देवध्यानविभिन्नशास्त्रविधयो यद्वा जलै: पावनं
होमस्तर्पणमस्तु वा शिवजपा: मन्त्रानुयोगोऽर्चनं
सर्वं तद्धि भवान् दिवाकरगुरो ! दाक्ष्येन सम्पादयेत्।।१३।।

प्रशंसन्ति शैलीं सदा गायनस्य
द्विजाश्श्रोतृरूपा: स्वयं लब्धुकामा:
न सन्तर्पयेयुश्च कं वाग्जलानि
वशिष्ठास्यजानीह हर्षप्रदानि।।१४।।

मया पत्रमेतद्भवत्स्मार्तभूतं
व्यलेख्यद्य तद्दृश्यसञ्चिन्तनैश्च
प्रणौमि श्रुतीहा-समुद्रक्तचित्त:

स्वकं चैव बाबागुरुं सुस्मरामि।।१५।।

यद्वा दिवाकरदिनेऽद्य दिनाकराऽर्चा-
चर्चा कृतेव च मया द्युतिकामनाभि:
श्रीमद्दिवाकरवशिष्ठगुरोश्च वार्तां
कृत्वा दिनं सफलमित्यनुभूय हृष्टः।।१६।।

लेखनसमयो दिनाङ्कश्च - ११:०५, २३-०६-२०१९ रविवारः।
स्थानम् - गाजियाबादस्थे गृहे।

॥ ३३. श्रीमत्र्यम्बकेश्वरचैतन्यमहाराजेभ्यः पत्रम् ॥

****

श्रीमत्र्यम्बकचैतन्य ! स्वामिन् ! चान्तर्जालके ।
कथाद्यैव मया सद्यः श्रुता यन्त्रेण भोः यते ।।१।।
तदत्र कथितं यच्च वदामीह मुदङ्गतः ।
सर्वं शास्त्रदिशाबद्धं कथितं भवता हि यत् ।।२।।

चित्तशुद्धिस्सदैवादौ कर्तव्या पुण्यकामिभि:।
दुर्हृद: क्रूरलोकाँश्च कथं गङ्गा विशोधयेत्।।३।।
शुद्धधी: पाव्यते तीर्थैर्दुर्धीर्नैव कदाचन।
गङ्गाद्योऽपि शुभान् लोकान् पुनन्तीत्यनुविद्महे।।४।।

नित्यं वसन्ति ये गङ्गाजले नापि तरन्ति ते।
भावशुद्ध्या विरहिता नार्चनैर्मार्ष्टुमर्हिता:।।५।।
तथा तानुद्धरेत्का क: जडान्कर्मवशङ्गतान्?
वसतोऽप्यमृते जन्तून्मत्स्यान्नक्राँश्च कच्छपान् ।।६।।

अतो मन:प्रधानत्त्वं शास्त्रिभिः प्रोच्यते सदा।
मनश्शक्त्या भवेद्देवो पशुर्ना वा सरीसृप: ।।७।।
कथाश्रवणकाले हि निद्रा चित्तं प्रबाधते ।
सावधानतया तस्माच्छ्रोतव्या श्रीहरे: कथा ।।८।।

श्रोतारो भूयसो वापि चिन्तनाद्रहिताश्च ये ।

भक्त्यादिवर्जितास्स्युश्चेत् कथाकारो न मोदते ।।९।।
एकोऽपि चिन्तनापन्नो विष्णुरागी भवेच्च चेत् ।
परमार्थमनस्को वै तत्र व्यास: प्रसीदति ।।१०।।

कथाकारगुरुर्यत्र तिष्ठेद्बाबागुरुस्स्वयम् ।
श्रोतृरूपं समास्थाय हृदाऽऽस्थाय व्यवस्थित: ।।११।।
एकत: कोटिशस्स्युर्वा कथायां श्रोतृमानुषा: ।
बाबागुरुस्समो भूयादेकत: श्रवणप्रिय: ।।१२।।

तत्र बाबागुरो: पक्षो बलीयानिति मे मति:।
यतो भक्तो विचारी चैवैकोऽपीह शताद्वर:।।१३।।
पात्रापात्रविवेको हि कथायां प्रथमो भवेत् ।
न धनस्यैव लोभाद्वा वर्तितव्यं हरिश्रितै: ।।१४।।

कर्णवासे मुदा गङ्गा-तीरे सत्प्रकृतिप्रिये ।
भवेद्भागवतीवार्ता को नु धन्यो भवेत्तत: ।।१५।।
स्वार्थी कस्त्विति चिन्ताश्चेद्वृण्वन्तीव यदा हि माम् ।
आत्मनो हितमासाद्यानन्यचित्तैर्हरिं भजेत् ।।१६।।

परमार्थो हि वै स्वार्थो, न स्वर्णादिसमर्जनम् ।
हेमादयोऽत्र नश्यन्ति सुकृतं तु दिवं नयेत् ।।१७।।
नैमिषारण्यतीर्थोऽपि दुष्टं तं कथमुद्धरेत् ।

पापचित्तो भवेद्यश्च सर्वशुद्धिविवर्जित: ।।१८।।

मनो यस्य हरानन्दे हर्यानन्दे निमज्जितम् ।
नैमिषारण्यतीर्थे स यायाद्यायान्न किं च तै: ।।१९।।
पदे पदे भवेत्तीर्थश्शिवाब्धौ मज्जिताय च ।
भावाद्रहिततीर्थेभ्यो क्वचिच्छान्तिर्न लभ्यते ।।२०।।

स्वगृहे सुखशय्यायां कथेयं भवतां मुखात् ।
श्रुतेदानीं, परश्वश्चागन्तुमिच्छामि तत्र वा ।।२१।।
शृणोतीह गुरुश्चापि त्र्यम्बकेशः कथां वदेत् ।
देवेशस्य च देवेशः स्वदेशश्च स्वदेशके ।।२२।।

लेखनसमयो दिनाङ्कश्च – १२-०४ मध्याह्ने , २५-०६-२०१९

स्थानम् – गाजियाबादस्थे गृहे ।

॥ ३४. श्रीमत्स्वरूपानन्दसरस्वती-महाराजेभ्यः पत्रम् ॥

****

श्रीशङ्कराचार्य! गुरोऽस्मदीयं हृज्ज्ञातभावं च भवान् शृणोतु
धर्मस्य चर्चां च करोमि काश्चिच्चाधर्मरूपाण्यपि संसृतानि।।१।।

आदौ भवत्पादसरोजसक्तः
प्रणम्य भक्त्या भुवि भक्तवृन्दं
श्रीभारतस्याऽखिलधर्मविभ्राड्
भवान् जनेभ्यश्शिवदो विभाति।।२।।

मोहयेद्यस्स्वरूपेण सर्वांश्च वै
चात्मविज्ञानरूपैश्चरेद् भूतले
शङ्कराचार्यपूज्यप्रतिष्ठां गतश्-
श्रीस्वरूपाऽभिधं तं नुमश्श्रद्धया।।३।।

महात्मन्! हे धर्मप्रथितचरण! श्रीहरिरत!
गुणाग्रो सद्वाचां निधिरिव भवान् मोदितमनाः
जनाग्रो ज्ञानाग्रो विदितशिवतोल्लास इव वा
भवत्पादाब्जानां भ्रमर इव चैष द्विज इह।।४।।

श्रीमन्! ममाऽद्य मनसि ह्युदितोऽस्ति कश्चित्

धर्मप्रचारसरणीशिवराग एवं
चाऽधर्मवर्धकगती: परिलोक्य विद्वन्!
नूनं मन: प्रलभते बहुधाऽपि शोकम् ।।५।।

साईंपूजा भवत्यद्य मन्दिरेषु बहुष्वपि।
अशास्त्रीयं हि तत्कर्म यवनस्यार्चनं जनै:।।६।।
रामनाम कदापीह येन नोच्चारितं च हा ।
तं वै मूढा वदन्त्यद्य साईंरामेति भक्तिभि:।।७।।

अजभक्षी स वै साईं मस्जिदाख्ये दुरालये।
वसति स्म तथाऽल्लाहं वन्दते म्लेच्छभाषया।।८।।
सर्वेषामेक एवास्ति स्वामी इत्येव सोऽवदत्।
किन्तु यवनधर्मं चाऽऽचरति स्म स दुर्मति:।।९।।

ज़म्-ज़मेत्युच्यते म्लेच्छैर्यज्जलं पावनं मतम्।
तदेव सोऽपिबद् भक्त्या न वै गङ्गाजलं क्वचित्।।१०।।
लशुनप्लाण्डुमांसादीन् अत्ति स्म स्नाति नैव य:।
तं म्लेच्छं साईं चेत्याख्यं मूढा मन्यन्त ईश्वरम्।।११।।

हा हा देवैस्सहाऽप्यद्य साईंधूर्तोऽपि पूज्यते।
मूढास्त्वेतन्न जानन्ति, विज्ञा: ज्ञात्वाऽपि मौनिन:।।१२।।
महाऽधर्मो पुनश्चैष प्रसरेद् भारते शुभे ।

साईंपूजानिषेधस्स्यात् धर्मज्ञैक्येन वै ध्रुवम्।।१३।।

हे स्वरूपाभिध! स्वामिन्! धर्मसम्राट्! जगद्गुरो!
यथाकथंचिल्लोकेऽस्मिन् साईंपूजा निरुध्यताम्।।१४।।
मृतकार्चा न वै कार्या म्लेच्छार्चा म्लेच्छतां नयेत्।
अतस्सर्वविधोपायै: साईंपूजा निरुध्यताम्।।१५।।

लोभान्धैश्चैव धूर्तैश्च साईंपूजा समर्थ्यते।
धर्मज्ञा: नैव शतशस्तन्निषेधं चरन्त्यपि।।१६।।
केवलं हि भवाँश्चात्र साईंरोधक उच्यते।
अस्मिन् धर्मपथे नूनं भवतां चानुवर्तिन:।।१७।।

वयं सनातनं धर्मं धारयामश्च सर्वदा।
जनता भवता साकं वर्तते हे स्वरूपराट्।।१८।।
हिमांशुर्गौड इत्याख्यो द्विजोऽयं य: प्रवर्तते।
स वै संस्कृतभाषाब्धौ मग्नश्शैवैश्च दृश्यते।।१९।।

प्रेषको हिमांशुर्गौडो
लेखनसमयो दिनाङ्कश्च - १२:२६ मध्याह्ने, २८-०६-२०१९ शुक्रवार: ।
स्थानम् - गाजियाबादस्थे गृहे।

॥ ३५. श्रीमत्र्यम्बकेश्वरचैतन्यमहाराजेभ्यः पत्रम् ॥

****

गुरुकुलस्थजनैरभिनन्दितोऽप्यथ नियुक्तिमवाप्नुत इच्छिताम्
यदि सकृद् यतिनेङ्गित आदृत: सकलमान्यजनैरपि मन्यते ।।१।।

द्विजमिमं च समर्थितवाँश्च यो भुवि समर्थपदेन समर्थ्यते
हरिमयं हरिशास्त्रसुपाठनं पददिशाऽर्थदिशा भवतु ध्रुवम् ।।२।।

यदि सुधांशुमठे सुधया भृताऽच्युतकथा हि हिमांशुमुखात् स्रवेत्
तदिह तत्त्वविवित्सुजनश्च वा श्रयति नैकमुदां सरितामिव ।।३।।

क्व भवतामधुना वसतिश्च वा विविदिषामि समुत्सुकमानस:
शिवविभूत्पथिकोऽम्बुदवद् भ्रमेत् स्वमनसैव च नीलपथे शुभे ।।४।।

न मतिमन् ! तृणमात्रमयं जनो द्विज! बिभर्त्ति हृदि क्वचिदन्यथा
धनविलोभमुतार्थकरं नभः परिविलोक्य शमं विशतीव वा ।।५।।

ह बृजघाट इति स्थलमत्र मे जनिभुवो नहि दूरमिवास्त्यपि
सुरसरीसरसामवगाहनैर्मम वय:प्रथमत्त्वमुदायत[30] ।।६।।

नरवरे हरिपादविनिस्सृताजलनिमज्जितजीवनसङ्गति:

---

[30] उद् अय् लङ्

पदपदार्थकरं फणिभाष्यकं बहुदिनैरलभै शिवमुन्मुखात् ।।७।।

मम मनो बहुधैति न निश्चयं किमथ कार्यमकार्यमिहास्ति मे
स्वहृदिजातविचारतया सरन् क्व सुसरामि भरामि ,न वेद्म्यहम्
।।८।।
बत विडम्बनसर्जितजीवनोऽप्यलसताभिरथाऽस्म्युत पीवरो
मवविनष्टसुखो न च मीवरो वरितुकाम इवास्मि न धीवर: ।।९।।

सरलता गरलं ह्यभिपाययेत् सुजनता सुजनं न च पावयेत्
मतिमतामपि को मुखमीक्षते धनवतां वदनं नृभिरीक्ष्यते ।।१०।।

अपि महात्मतया यश एति यस्स तु धनैर्न तपोभिरहोऽधुना
परविवञ्चनदक्षजनश्च वा प्रथितपूज्यपदं प्रतियाति हा ।।११।।

न च वयं पथिका: कुपथस्य वा नरकदं नहि मार्गमुपास्महे
यदि च दु:खभृतं भवताज्जगत् शिवकराश्रयणं शिव! विद्महे ।।१२।।

न समपादि मया शुभविघ्नता
न विदिता क्वचिदन्यकृतघ्नता
क्व लभतां पुरुषोऽन्यविधाघ्न्यतां
व्यरचि यद्यपि काव्यजमोद्यता ।।१३।।

लेखनकालो दिनाङ्कश्च – ०२-०५ मध्याह्ने , ११-०७-२०१९
स्थानम् - गाजियाबादस्थे गृहे ।

॥ ३६. गुरुपूर्णिमादिने श्रीबाबागुरुभ्यः पत्रम् ॥

****

हरिस्त्वं मतो नो तुलस्या तवाऽर्चा
हरस्त्वं मतो नैव बिल्वै: कृताऽर्चा
गुरुस्त्वं तथापीह सेवा न ते, हा
क्षमस्वाऽपराधं मदीयं, तवाऽहम्।।१।।

बुधस्त्वं मतो हाऽर्चितो नैव शास्त्रै:
कविस्त्वं मतोऽप्यर्चितो नैव काव्यै:
शुभं त्वं मतं, कर्षितानि त्वदर्थं
शुभानीव, नाऽऽत्मश्रमैर्वा तपोभि:।।२।।

जना: दूरदेशात् समायान्ति भक्ता:
सुमाल्यैर्धनैस्त्वां हृदा पूजयन्ति
न ते रोचते स्वीयपूजेति जाने
तथा स्वीकरोतीति भक्त्या वशङ्ग:।।३।।

अहं गाजियाबादपुर्यां वसामि
गृहे च स्मरामि व्यतीतान्यहानि
भवन्तं, कपीशालयास्याश्रमं च
विशिष्टाश्च चर्या: भवत्सौहृदं च।।४।।

प्रत्येकं घटनास्स्मरामि बुधराट् ! सर्वं च दृश्यं मम
मस्तिष्कस्थितमस्ति वै दशसमैर्वासेन यज्जीवितं

यो मामन्वहमेव शैवपथिकः कल्याणमार्गेऽनयत्
तं त्वामद्य गुरूत्सवे गुरुवर! श्रद्धाभिराभावये।।५।।

केचिच्चाऽद्य युगे चरन्त्यपि जनाः लोके कृतघ्ना इव
विद्यादातृगुरुं स्मरन्ति न गुरो! सन्दर्शयन्त्यात्मतां
नाऽहं चास्मि तथा , विडम्बनयुते भ्रान्तोऽधुना जीवने
दूरस्थ: कविताश्रयैश्चरणयोस्ते वन्द्यपुष्पार्पणम् ।।६।।

यच्च स्थापितमस्ति वाऽथ हनुमद्धामाऽतिरम्याश्रम:
अश्वत्थस्थविशालदेवभवनं यस्यास्य आस्थायते
वेदेभ्योऽर्पितजीवना सुबटुका धर्माश्रया: शाब्दिका:
जीव्योज्जीवनपद्धतिं हि भवतां जानन्ति निर्देशनै: ।।७।।

सुशतकं कृतवान् भवतस्स्तुते: झटिति तत्तव पादतलेऽर्पयन्
मनसि तोषमुपाजनयन् स्वके पददिशा विसरामि ह जीवनम् ।।८।।

हे सद्गुरो निखिलशास्त्रविवेकसिक्त
हे शैवलोकवसते शुभतत्त्वकर्षिन्
हे हेमवीर्यतपसामभिदृश्यरूप
तद्दिव्यलोकवपुषामभिवर्ण्यमान ।।९।।

यो वायुरेव वहतीव विना शरीरैः

हृत्कल्पनाश्रितजवो हरिरङ्गसेवी
नत्त्वा भवन्तमहमद्य हिमांशुगौडः
कृत्वा वसन्ततिलकां तिलकं करोमि ।।१०।।

लेखनसमयो दिनाङ्कश्च- १:२६ मध्याह्ने, १६-०७-२०१९,

स्थानम् - गाजियाबादस्थे गृहे ।

॥ ३७. श्रीमत्सतीशकपूराय पत्रम् ॥

****

धन्यानि शास्त्रवचनानि विभिन्नवाग्भिर्-
यानीह मङ्गलपराणि कविश्रितानि
भूयात्समेभ्य उत सौख्यकरं शुभाढ्यं
नव्यं हि वर्षमिति कामयमान ईशम् ।।१।।

किं किं ब्रवाणि मतिमन्नववर्षहर्षं
केभ्यश्चिदस्तु शुभदं बहुधा शिवाढ्यं
केचित्तुदन्ति पुरुषा निजभाग्यलेखात्
किन्त्वद्य सर्वसुखतापरवाग्युतोऽस्मि ।।२।।

शीते विभिन्नरमणीरमणाश्रिता ये
तेभ्यस्सुखप्रदमिहास्तु नवीनवर्षम्
दुग्धं पिबन्त्यपि घृतं बलवत्सुदेहाः
धन्या वसन्ति निलयेषु हि भाग्यवन्तः ।।३।।

केचिद्विभिन्ननगरीभ्रमणेषु सक्ताश्-
शैत्यं न ते विगणयन्त्यधिकं कथञ्चित्
नानासुदृश्यपरिरञ्जक आह तेषां
यात्रासुखाञ्चितशिवाञ्चितवत्सरोऽसौ ।।४।।

ये माणवा गुरुकुलेषु वसन्ति भक्त्या
गङ्गातटेऽधिक उतोद्भवतीह शीत:
नोष्णं जलं बहुतरं मिलतीव तेभ्यस्
तादृग्दिनैर्नवसमे मम तत्र वास: ।।५।।

हे हे सतीशबुध! बोद्धृसुखप्रदातः!
हेऽहो कपूरविदिताग्रपदं प्रयात!
संस्थानवृत्तिमुदितो नवकाव्यकारिन्!
नव्यं भवेच्च भवते शुभदं सुवर्षम् ।।६।।

किं किं ब्रवाणि मतिमन्नववर्षहर्षं
केभ्यश्चिदस्तु शुभदं बहुधा शिवाढ्यं
केचित्तुदन्ति पुरुषा निजभाग्यलेखात्
किन्त्वद्य सर्वसुखतापरवाग्युतोऽस्मि ।।७।।

चायं पिबामि मतिमन्नहमत्र गेहे
नव्यप्रभातविभयाऽन्विखं प्रपश्यन्
सुस्फूर्त्तिवत् प्रभवतीव मनश्शुभत्त्वं
यातीति सौख्यदिशया वितनोमि चिन्त्यम् ।।८।।

को मे सुखं वितनुते नहि चिन्तयामि
को मे ददाति दुःखमिति नैव च चिन्तनात्तः
शैवं विभाव्य विचरन्ति हिमांशुरूपाः
मृत्त्वापि ते नहि पतन्ति शुभांशुरूपाः ।।९।।

दिव्यानि कर्मगतिकानि मुदा विभान्ति
यस्येह चाऽच्युतहरेरखिलात्मनश्च
तस्यैव सेवक उतात्र निसीदताच्चेत्
को वा सुखं व्रजति शोकयुते न जाने ।।१०।।

हे हे विचिन्तनपर! श्रुतिकर्मशीलिन्!

हे हेमपूरुषगुणाकरकल्पनाढ्य!
व्यर्थं हिमांशुरिह नैव चरेच्च चर्यां
सन्दृश्यते त्विह जनेन विशिष्टतथ्यम् ।।११।।

षट्कर्मसूच्चमतयोऽपि च सावधाना:
ये संस्कृतागमपुराणसुगानरक्ता:
काव्येषु तन्वत उतापि च ये स्वचिन्त्यम्
तेभ्यो दिनेषु पदवाँल्लिखतीह पत्रम् ।।१२।।

इत्त्थं ममाद्य मनसीव शतानि भान्ति
नानार्थचिन्तनपराणि तथापि वाचं
संरुध्य लेखनमिदं कवनात्मकं यत्
नत्त्वा सतीशपदमेष हिमांशुरेति ।।१३।।

....

हिमांशुगौडः
०५/०१/२०२०
पूर्वाह्णे १०/०२, रवौ । गाजियाबादगृहे ।

......

॥ ३८. डॉ.अरविन्दतिवारिणे पत्रम् ॥

****

अज्ञात एव कविरेष हिमांशुगौडो
यो वाऽत्र पञ्चघटिकाभिरहो करोति
सर्वां शतीमपि समस्तजगत्कथाद्यं
दृष्टो गते स दिवसे भवता कवे हे।।१।।

वासन्तमोद उत चापि तनोमि किञ्चित्
शैत्यं च दूरितमथो बहुचायपानै:
नैकेषु शास्त्रपरिचर्चनतत्परेषु
विद्वन्नहं निजविचारझरीप्रवर्ती।।२।।

नामन्त्रणैरुत शतैर्व्रजतीव चैष
सभ्यैर्जनै: प्रतिदिनं सुनिमन्त्रितोऽपि
एकान्तरोचितधियैव सरामि जीव्यं
मच्छैवकामिदिनलोकविभातमेतत्।।३।।

तीव्रायहारितहयग्रथिते रथे यो
भ्राम्येत्सुदिव्यपुरुषो द्विजपूजनार्थ:
यं ध्यायमानशिवचित्तनिपूतदेहा:
नूनम्भरन्ति सुखतां द्रुतमर्थशीला:!!४!!

तस्यैव सूर्यविदितस्य सुरस्य दृष्टिं
वाञ्छेत्सदैव हिमराडभिधो हिमांशुर्-
लोके निपत्य निजभाग्यविलेखताभि:
के नो शुभाशुभमिव प्रतियान्ति लोका:!!५!!

सत्पत्रिकासु बहुभाषितकीर्तनासु
श्रीसंस्कृतोल्लसितवाक्स्रवितामृतानि
नूनं प्रसादपरकैरभिधापराणि
व्यङ्ग्यानि चापि बहुधा प्रथितानि काव्यैः!!६!!

हे हेमगुण्यपरिभास्करलोकनार्ची
हे हेऽरविन्दपरिफुल्लनपूजनार्थी
हेमप्रदायिपुरुषार्चनसंरतत्त्वात्
के यान्ति नोच्चपदवीं शुभतां शिवाशाः!!७!!

प्राशंस्यमेव तनुते कविपूजितानां
नैष्काम्यशोभितहृदां शिवभावुकानां
विप्रार्चिणश्शिव उत प्रददाति पद्यं
यस्मै हिमांशुरिति स वै कविभिर्विबोध्यः!!८!!

रात्रिं दिनं नहि वयो गणयामि भोज्यं
वित्तं शुभं स्मरकरीं भुवि किञ्चिदद्धा
वाण्येकलासनिरतो हिमवाञ्जनोऽसौ
सारस्वतीमथ कृपां ध्रुवमर्थयामि।।९।।

चायं ददातु न गृहे यदि कोऽपि मह्यं
शत्रुस्स मे, कविजना! इति वा विदन्तु
कोटीशतां नहि कदापि दधामि चित्ते
यो मे न पाययति चायमिदं च तीव्रम्।।१०।।

चायं निपीय इह भोजनवर्जितोऽस्मि

सत्पाचनावघटनं कुरुते च चायं
किन्तूच्चवाग्भिरहमत्र वदामि सर्वान्
चायं जहाति न कदापि हिमांशुगौडः!!११!!

हे हेऽरवीन्दकविलोकसुखप्रयातः!
हे शम्भुभक्तिनिरतादरदर्शिविप्र!
श्लोकैरसौ दिनगणान्परियापयेद्यस्-
सोऽसौ विबुद्धपुरुषैर्गदितो हिमांशुः!!१२!!

आहूत एव गुणवाँश्च सभां प्रयाति
कीर्तिर्न मुह्यति कविं यमहो समग्रा
यस्स्वीयचिन्तनसरो लभते शिवार्थं
लोके हिमांशुरिति सोऽत्र जनैर्विबोध्यः!!१३!!

सङ्कोचतां च परियामि ह यत्र कुत्र
लज्जा न मामुत जहाति समाजकार्ये
नैवम्प्रयाम्यत इव क्वचिदर्थवत्सु
कार्येषु नैकजनसङ्कुलसुस्थलेषु।।१४।।

यो वैष दर्शितगुणोऽत्र वदामि तुभ्यं
अज्ञात इत्यभिहितो भवतैव विद्वन्
चेत्प्रातिभं विकसतीव कदापि पुंसु
नो गण्यते हि सुजनैः परिचेतृभावः!!१५!!

शोधस्य चिन्तनपरस्स्वरसूत्रभातः
कौमुद्यपीव मम भट्टकृता विभायात्

तस्यां पदार्थगदनं परिटिप्पणं च
तद्ध्येयमेव मम चित्तगतं विभाति।।१६।।

यामीह चाद्य शयनं शुभरात्रिरस्तु
कल्याणदास्तु भवते , कविताप्रकल्पा
काव्यार्थखे च परिभातुमथो हिमांशु:
आलिङ्गयेत्स्ववपुषा निजयामिनीं ताम्।।१७।।

******

हिमांशुगौड:
लेखनकालो दिनाङ्कश्च
१०/४२ रात्रौ, ३१/०१/२०२०
गाजियाबादे।

॥ ३९. डॉ.महेशनारायणशास्त्रिणे पत्रम् ॥

****

हे श्रीमहेशबुध! काव्यखहर्षिभास!
नानाप्रकृत्यभिनिविष्टसुहृष्टभाव!
किं वा वदानि परिलोक्य भवन्मनस्कं
चोदीरितं सुखकरं कवितार्थभावम् ।।१।।

किन्त्वत्र या बहुदिनैर्भवतस्सकाशं
विद्वन्! शिवार्थमयतत्त्वकरी च चर्चा
सन्तानिता परिचयोत्सुकमुख्यवार्ता
तत्रेष्टशिष्टपदवीमभियाति लक्ष्यम् ।।२।।

वासं ह्युपेत्य विहगा हि दिनान्तकाले
नानान्नसञ्चयकृतोदरसुव्यवस्थाः
संशेरते श्रमवशात् स्वखगीरतास्ते
नीडेषु रात्रिजसुखं जनयन्ति शान्ताः।।३।।

किम्मानुषेषु पुरवासिजनेषु चैवं
वित्तार्थधावितमनस्सु तथैवमस्ति
चिन्ताकुलाः निशिदिनं क्व हि शान्तिरेषां
होऽहोऽद्य मानुषजनाः ह खगादनुच्चाः।।४।।

एवङ्कवित्त्वपदकाङ्क्षिजनोऽप्यसौ वा
रात्र्यर्धकालविगतेऽपि न शेत एव
पश्येच्च चिन्तयति विश्वगतीश्शिवार्थं
मन्ये स चिन्तनसरो हृदयस्तरीयः।।५।।

चायं निपीय परिसुस्थ इवास्मि वाऽहं
मन्ये दिनान्तसमयेऽनुचिता ह्यशान्तिः
तस्मात्स्वकक्ष इव संस्थित एष विप्रश्-
शान्तीभवन् श्रुतिपदार्थविचिन्तनार्थी ।।६।।

किं वा वदानि सुरवाक्शरण! प्रमोदिन्!
नारायणाभिधजनार्थकरश्च शास्त्रिन्!
नानाव्यथाकुलजनाः जगतीह नूनं
किं किं न दुःखपदकं प्रतियान्ति भाग्यैः ।।७।।

भावश्रियं च विदधामि सदैव सद्भ्यो
मध्वर्थभृच्छिवरतेभ्य इवाऽर्चकेभ्यः
लोभाच्छलाद्विरहितेभ्य उत प्रियेभ्यः
केभ्यश्चिदेव जन एष हिमांशुगौडः।।८।।

स्वारीमपि श्रुतिपदार्थविवेचयित्रीं
चर्चां प्रवाञ्छति जनो बत लब्धकालः
शब्दार्थकृत्स्वपि न सा परिचर्च्यतेऽद्य
नागेशशास्त्रकथने विबुधाः प्रवीणाः ।।९।।

प्रेषको हिमांशुगौडो,
लेखनकालो दिनाङ्कश्च – ०८:२३ दिनान्ते, ११/०२/२०२०,भौमवासरः।
गाजियाबादे।

॥ ४०. श्रीमन्महेशझाभ्य: पत्रम् ॥

****

झटिति पठति चादित्यस्तवं विप्रबालो
ऽप्युदित इत इव प्राग्दिश्यहो रश्मिरज्जु:
सकलविकललोकामोदकूलं वितन्वन्
जयतु जयतु हेमश्री:! हरिद्वाजिराज:।।१।।

अहमपि सुपुरेऽत्र गाजियाबादनाम-
प्रथितविविधसुव्यापार-चर्यानिमग्ने
शयनगतसमालस्यं विहाय प्रभाते
पिपठिषुहृदयश्श्रीपस्टनस्य प्रभातम्।।२।।

सुरवरशुभभाले शोभमानाद्धिमांशो:
विगलितकररूपैश्श्रीशिवप्रीतिभाजां
द्विजकुलपदनिष्ठप्राप्तकाव्यैकभावो
जनित इव विबोध्यो गौड एवं हिमांशु:।।३।।

क्व च परिनियमानां विप्रजीव्यैकनिष्ठा
क्व च कविकुलजानामस्तु मुक्तस्वभाव:
इति परिगणनाभ्योऽप्यस्तु युक्तोऽथ मुक्तश्
श्रुतिशरणफलाढ्यो मामकीनप्रभात:।।४।।

अदितिजमुदिताश्वोद्धावनप्रेरणाढ्यो
हतनिखिललोकध्वान्तहेमप्रभाढ्यश्-
श्लथयितभवबन्धप्रीतिगाथामुदाढ्यो
भवतु भवत एवं सुप्रभातश्शुभाढ्य:।।५।।

क्व वयमुपरमेम श्रौतत्त्वार्थकल्पे
क्व गुरुगुणगीर्वाणार्थवाक्सुप्रमोदे
मुकुलितकमलानां संविकासेतिदक्षं
विदितशतकरं तं भावयाम: प्रभाते।।६।।

हरितहयरथे यो राजते हेमरूपो
सुखसृतशुभभावैर्भ्राजते खे विशाले
प्रतिवदति समेभ्योप्युन्नतिप्राप्तितथ्यं
सकलधनपदादीन्प्राप्नुयात्कर्मशील:।।७।।

शतकमपि कुरुते वै पञ्चकैर्यो घटीनां
भवतु विषयवीप्सा चेच्च नानार्थशीला
तदपि विरमतीवाऽहो न यस्य प्रवाहो
ह्ययमिह स हिमांशुस्तां प्रभांशुं प्रणौति।।८।।

अयि कविकुलमौले! सुप्रभातार्थदक्ष!
भवतु भवत एतत्स्तोत्रमाशुप्रमोद्यं
झटिति विशति चित्ते शारदा यस्य काव्ये
प्रणमति स हि महेशं पस्टनाख्यं च झाख्यम्।।९।।

विलसितशतपद्यैर्मालिनीबद्धगुच्छैस्-
स्तवनमपि धिया यद्व्यारचि श्रीरवेश्च
तदिह विगतकाले वत्सरस्य द्वितीये
बुधकविजनलोकानां करेष्वर्पयामि।।१०।।

नहि नहि लवमात्रं द्वेषदुर्भावनां वा

श्रयति जन इतीहा श्रोतृभिर्मे विबोध्या
चरति कटुकुनीर्तिं यः कुनेता प्रजासु
शतसमनरकाणां प्राप्यते सूर्यपुत्रात्।।११।।

अयि कविजरसां वा सुप्रसन्नैकरूप!
अयि रवितपसां वा ख्यापने नव्यरूप!
अयि विबुधसभानां मण्डनादर्शिभूप!
नमति मुदितबुद्ध्या त्वां जनोऽसौ हिमांशुः।।१२।।

अपि सुकविगणानां मेलने दृष्टवान्यद्
अमृतमयकवित्त्वं पीतवाँस्त्वत्सुशब्दैः
स्मरतु, च मयराष्ट्रे पूर्वमासे मयापि
निजहृदयसुभावाढ्यं स्वकाव्यं ह्यगायि।।१३।।

उदितहृदयभावैः पत्रलेखैर्दिनानि
प्रथितविविधवृत्तैर्यः फलाढ्यानि कुर्वन्
निजजगति रमेतेत्यर्थचेत्रेकभावः
व्यलिखदिह सुपत्रं त्वत्कृते मालिनीश!!१४!!

हिमांशुगौडो
लेखनसमयो दिनाङ्कश्च - १२:२२ मध्याह्ने, २३/०२/२०२० , रवौ।
गाजियाबादस्थे गृहे।

।। डॉ.हिमांशुगौडस्य संस्कृतकाव्यरचनाः ।।		
१	श्रीगणेशशतकम्	(गणेशभक्तिभृतं काव्यम्)
२	सूर्यशतकम्	(सूर्यवन्दनपरं काव्यम्)
३	पितृशतकम्	(पितृश्रद्धानिरूपकं काव्यम्)
४	मित्रशतकम्	(मित्रसम्बन्धे विविधभावसमन्वितं काव्यम्)
५	श्रीबाबागुरुशतकम्	(श्रीबाबागुरुगुणवन्दनपरं शतश्लोकात्मकं काव्यम्)
६	भावश्रीः	(पत्रकाव्यसङ्ग्रहः)
७	वन्द्यश्रीः	(वन्दनाभिनन्दनादिकाव्यसङ्ग्रहः)
८	काव्यश्रीः	(बहुविधकवितासङ्ग्रहः)
९	भारतं भव्यभूमिः	(भारतभक्तिसंयुतं काव्यम्)
१०	दूर्वाशतकम्	(दूर्वामाश्रित्य विविधविचारसंवलितं शतश्लोकात्मकं काव्यम्)
११	नरवरभूमिः	(नरवरभूमिमहिमख्यापकं खण्डकाव्यम्)
१२	नरवरगाथा	(पञ्चकाण्डान्वितं काव्यम्)
१३	नारवरी	(नरवरस्य विविधदृश्यविचारवर्णकं काव्यम्)
१४	दिव्यन्धरशतकम्	(काल्पनिकनायकस्य गुणौजस्समन्वितं काव्यम्)
१५	कल्पनाकारशतकम्	(कल्पनाकारचित्रकल्पनामोदवर्णकम्)
१६	कलिकामकेलिः	(कलौ काममनृत्यवर्णकं काव्यम्)